महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Central University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

ज्ञान शांति मैत्री

बी.एड. पाठ्यक्रम

सत्र - 2021-23

पाठ्यक्रम कोड : BEd - 012

द्वितीय सेमेस्टर

चतुर्थ पाठ्यचर्या

पाठ्यचर्या कोड : BEd- 024

पाठ्यचर्या का शीर्षक : विद्यालय विषय शिक्षण-I (भौतिकीय विज्ञान शिक्षण)

दूर शिक्षा निदेशालय

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)

द्वितीय सेमेस्टर : शिक्षा 024 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण

प्रधान संपादक

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादक

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

पाठ्यचर्या निर्माण समिति

प्रो. अरबिंद कुमार झा
अधिष्ठाता, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. गोपाल कृष्ण ठाकुर
सह प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री ऋषभ कुमार मिश्र
सहा प्रोफेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादक मंडल

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. दीपक पुनसे
सह प्रोफ़ेसर
स्वालंबी शिक्षण महाविद्यालय,वर्धा

श्री धर्मेंद्र शंभरकर
सहा. प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. गुणवंत सोनोने
सहा. प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. रामाचार्या पाण्डेय
सहा. प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

इकाई लेखन

समन्वयक -डॉ. गोपाल कृष्ण ठाकुर

इकाई -1
सुश्री सारिका राय शर्मा

इकाई -2
श्रीमती शिल्पी कुमारी

इकाई -3
श्रीमती आर. पुष्पा नामदेव

इकाई-4
सुश्री सुहासिनी बाजपेयी

इकाई- 5
सुश्री तक्षा शंभरकर

प्रधान संपादक की कलम से.....

संपादक की कलम से.....

अनुक्रम

क्र.सं.	इकाईयों का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	इकाई – 1 भौतिकीय विज्ञान : एक अनुशासन	6-19
2.	इकाई – 2 भौतिकीय विज्ञान पाठ्यक्रम	20-29
3.	इकाई – 3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण	30-54
4.	इकाई – 4 सीखना सिखाना	55-78
5.	इकाई – 5 विज्ञान में आकलन	79-99

1. भौतिकीय विज्ञान: एक अनुशासन

संरचना

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 विज्ञान क्या है?

1.4 विज्ञान की प्रकृति

अपनी प्रगति की जाँच करें

1.5 वैज्ञानिक विधि

1.5.1 वैज्ञानिक प्रयोग

1.5.2 वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता एवं इसकी प्रवृत्तियां

1.5.3 वैज्ञानिक विधि के गुण

1.6 वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति

अपनी प्रगति की जाँच करें

1.7 विज्ञान की शाखाएँ

1.8 भौतिकीय विज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1.9 विद्यालय पाठ्यक्रम में भौतिकीय विज्ञान का महत्व एवं स्थान

1.10 भौतिकीय विज्ञान का विज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्ध

अपनी प्रगति की जाँच करें

1.11 विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज में अन्तःक्षेपण

अपनी प्रगति की जाँच करें

1.12 सारांश

1.13 अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

1.14 संदर्भ पुस्तकें

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आपविज्ञान की प्रकृति को समझते हुए उसके अर्थ को स्पष्ट करने में सक्षम हो जाएँगे।

- विज्ञान को प्रक्रिया एवं परिणाम के रूप में देखने में समर्थ हो जाएँगे।
- वैज्ञानिक विधि को समझने के पश्चात् विभिन्न समस्याओं के समाधान में इसका उचित उपयोग कर पाएँगे।
- अनुशासन के रूप में भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति को समझेंगे।
- एक शिक्षक के रूप में अपने छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति का विकास कर सकेंगे।

- एक अनुशासन के रूप में भौतिकीय विज्ञान के विकास को समझते हुए वर्तमान में विद्यालयों में इसके स्थान एवं महत्व को जानेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान का विज्ञान की अन्य शाखाओं से सह-सम्बन्ध समझेंगे तथा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के लिए समन्वित उपागम (Integrated Approach) का विकास करेंगे।
- विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज में अन्तःक्षेपण स्थापित करेंगे।

1.2 प्रस्तावना

भौतिकीय विज्ञान को हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वर्तमान युग में भौतिकीय विज्ञान के बिना जीवन असंभव है। वर्तमान इकाई में आप विज्ञान की प्रकृति एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परिचित होंगे। साथ ही आप यह भी जानेंगे कि भौतिकीय विज्ञान का विकास एक अनुशासन के रूप में कैसे हुआ तथा समकालीन परिप्रेक्ष्य में विद्यालयों में इसका क्या स्थान एवं महत्व है? वर्तमान काल तकनीकी या प्रौद्योगिकी का युग कहलाता है। इस इकाई के माध्यम से आप समाज, प्रौद्योगिकी एवं भौतिकीय विज्ञान की परस्पर अंतःक्रियाओं के विषय में ज्ञान अर्जित करते हुए भौतिकीय विज्ञान के विज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्धों को भी समझेंगे और एक विज्ञान शिक्षक के रूप में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में समन्वित उपागम के महत्व को स्थापित करेंगे।

1.3 विज्ञान क्या है?

मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु होता है। अतः हमारे प्राकृतिक एवं सामाजिक परिवेश में होने वाली घटनाओं के बारे में जानने की हमारी जिज्ञासा सहज और स्वाभाविक होती है। उदाहरण के लिए, हवा क्यों चलती है? वर्षा कैसे होती है? रात और दिन का चक्र कैसे चलता है? इस प्रकार के बहुत से प्रश्न हमारे मस्तिष्क में आते ही रहते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों का उचित उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करते हुए सत्य की खोज में लगे रहने के कार्य को विज्ञान का नाम दिया जा सकता है। विज्ञान की यह मान्यता है कि कोई भी बात अकारण ही घटित नहीं होती है। अगर हम सड़क पर चलते-चलते गिर पड़ते हैं तो इसके पीछे भी कोई उचित कारण अवश्य है। इस प्रकार के कारणों की खोज का कार्य भी विज्ञान के द्वारा ही पूरा किया जाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि विज्ञान वह व्यवस्थित ज्ञान या विद्या है जो विचार, अवलोकन, अध्ययन और प्रयोग से मिलती है, जो कि किसी अध्ययन के विषय की प्रकृति या सिद्धान्तों को जानने के लिये किये जाते हैं। विज्ञान शब्द का प्रयोग ज्ञान की ऐसी शाखा के लिये भी करते हैं, जो तथ्य, सिद्धान्त और तरीकों को प्रयोग और परिकल्पना से स्थापित और व्यवस्थित करती है। यहाँ हमने विज्ञान को एक प्रक्रिया के रूप में न मानकर प्रक्रिया विशेष के परिणाम के रूप में माना है। इस तरह विज्ञान से तात्पर्य क्रमबद्ध, सुव्यवस्थित एवं संगठित ज्ञान-भण्डार से लगाया गया है। विज्ञान के इस रूप में हमें विभिन्न सूचनाओं तथा जानकारियों से सम्बंधित तथ्य (Facts), संप्रत्यय (Concepts), सामान्यीकरण (Generalizations), नियम (laws) तथा सिद्धांतों (Theories) से निर्मित सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक ज्ञान का अथाह भण्डार प्राप्त होता है जिसे फिर हम अपनी सुविधा की दृष्टि से विभिन्न शाखाओं जैसे भौतिकीय विज्ञान, रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणी विज्ञान आदि में बाँटने का प्रयत्न करते हैं। विज्ञान केवल मात्र ज्ञान का भण्डार नहीं है, वह इस ज्ञान-भंडार के अस्तित्व का कारण भी है और अगर गहराई से सोचा जाए तो विज्ञान अपने मूलरूप में प्रक्रिया है, प्रक्रिया का परिणाम मात्र नहीं है। ज्ञान अपने

आप में महत्वपूर्ण तो होता है परन्तु उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण और मूल बात उस ज्ञान तक पहुँचने का मार्ग है। विज्ञान हमें उस ज्ञान तक पहुँचने का मार्ग दिखाता है। यह बताता है कि किस तरह कार्य-कारण संबंधों (Cause and Effect Relationships) की खोज की जाती है, समस्या की तह में कैसे उसका निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाधान खोजा जाता है और कैसे इस तरह धीरे-धीरे इस प्रकार का ज्ञान भण्डार इकट्ठा किया जाना चाहिए जिसको आधार बनाकर आगे सत्य की खोज को जारी रखा जा सके। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि विज्ञान को एक ऐसी प्रक्रिया या विधि के रूप में जाना जाता है जिससे सत्य की खोज की जाती है। आइये देखे कि विज्ञान की प्रकृति या स्वभाव क्या है ?

1.4 विज्ञान की प्रकृति

1. विज्ञान में 'क्या है?', 'यह क्यों हो रहा है?' तथा 'अगर वह इसी तरह चलता रहा तो इसका परिणाम क्या होगा?' आदि प्रश्नों के अध्ययन को अपना लक्ष्य बनाया जाता है। यह एक निरंतर बढ़ने वाली और अन्तर्निहित प्रयोगसिद्ध निरीक्षण की श्रृंखला है जिसका परिणाम विचारों और सिद्धांतों का रूप लेता है। विज्ञान एक व्यवस्थित ज्ञान भण्डार है। विज्ञान का ज्ञान संचित एवं क्रमबद्ध होता है।
2. विज्ञान में अध्ययन के लिए एक विशेष पद्धति, जिसे **वैज्ञानिक विधि** का नाम दिया जाता है, अपनाई जाती है। यह विधि अध्ययन के लिए प्रयुक्त अन्य विधियों की तुलना में निष्पक्ष (Impartial), वैध (Valid), विश्वसनीय (Reliable), निश्चित (Definite) तथा वस्तुनिष्ठ (Objective) होती है।
3. विज्ञान अपने अध्ययन करने वाले व्यक्तियों के दृष्टिकोण में भी अपनी स्वयं की प्रकृति के अनुकूल पर्याप्त परिवर्तन ला देता है। इस दृष्टि से एक वैज्ञानिक तथा विज्ञान के विद्यार्थी का अध्ययन करने का ढंग ही वैज्ञानिक नहीं होता अपितु उसका स्वयं का व्यक्तित्व भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुरूप बन जाता है और परिणामस्वरूप निष्पक्ष रूप से तर्क, परीक्षण तथा प्रयोगों के आधार पर अपनी बात कहने तथा दूसरों की बात समझने वाला स्वभाव बन जाता है। अतः विज्ञान एक संगठित विवेकबुद्धि है।
4. विज्ञान का ज्ञान भण्डार और अध्ययन पद्धति इस प्रकार की होती है कि उसकी सहायता से किसी वस्तु या किसी घटना विशेष की पूरी सही जानकारी लेने में कोई दिक्कत नहीं आती। 'वस्तु क्या है?', 'उसकी प्रकृति तथा विशेषताएँ क्या हैं?', 'घटना क्या है?', 'घटना के घटित होने का क्या कारण है?', 'इसके अंतर्गत कौन-से चर (Variables) कार्य कर रहे हैं?', इत्यादि। इस प्रकार विज्ञान वस्तुओं और घटनाओं का सही विश्लेषण हमारे सामने उपस्थित कर सकने में समर्थ होता है तथा इन सबकी व्याख्या कार्य तथा कारण (Cause and Effect) के आधार पर करने में भी हमें समर्थ बनाता है।
5. विज्ञान की एक अनूठी विशेषता उसकी भविष्यवाणी कर सकने की शक्ति में है। विज्ञान घटनाओं के घटित होने के कारणों तथा अंतनिर्हित चरों (Variables) का यथार्थ अध्ययन करके यह बताने में पूरी तरह समर्थ होता है कि किन परस्थितियों में कौन-सा पदार्थ किस प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा तथा कब किस प्रकार की घटना या प्रक्रिया घटित होगी। इस तरह विश्वस्त भविष्य कथन वैज्ञानिकता की सबसे बड़ी कसौटी माना जा सकता है। कोई विषय उतना ही वैज्ञानिक माना जाता है जितनी कि उसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता पाई जाती है।

अपनी प्रगति की जाँच करें

विज्ञान को परिभाषित करें।

____

'विज्ञान प्रक्रिया एवं परिणाम दोनों है।' टिप्पणी कीजिए।

____

3. विज्ञान की प्रकृति का विश्लेषण कीजिए।

____

1.5 वैज्ञानिक विधि

विज्ञान में अध्ययन के लिए वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिक विज्ञान का अध्ययन करने में या खोज करने में तर्कपूर्ण ढंग से जिस विधि को अपनाता है उसे वैज्ञानिक विधि कहते हैं। प्रारम्भिक स्तर पर वैज्ञानिक पद्धति के चार चरण होते हैं – समस्या, परिकल्पना, प्रयोग व निष्कर्ष। यह विधि अध्ययन के लिए प्रयुक्त अन्य पद्धतियों की तुलना में बहुत अधिक निष्पक्ष, वैध, विश्वसनीय, निश्चित तथा वस्तुनिष्ठ होती है। वैज्ञानिक विधि निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रयोग में लायी जाती है:

1. विज्ञान के तथ्यों, सूचनाओं का संकलन करने के साथ-साथ उसका व्यवहार एवं मनोवृत्ति भी वैज्ञानिक होनी चाहिए।
2. वैज्ञानिक विधि कक्षा के वातावरण तथा अध्यापक के व्यक्तिगत उदाहरण द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करने में समर्थ होती है।
3. अतः 'वैज्ञानिक विधि' समस्या को तर्कपूर्ण ढंग से हल करने की विधि है। वैज्ञानिक विधि में निम्नलिखित चरण होते हैं:
4. **समस्या का निर्धारण-** वैज्ञानिक के सामने अनेक समस्याएँ होती हैं। इनमें से कुछ समस्याओं के समाधान तत्काल हो सकते हैं परन्तु कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जिनके समाधान हेतु काफ़ी विचार-विमर्श कर निर्णय लेना होता है। वैज्ञानिक सर्वप्रथम समस्या को बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से देखता है। 'समस्या क्या है? कैसी है? और क्यों है?' आदि प्रश्न उसके मस्तिष्क में उठते हैं। जैसे- हवा क्यों चलती है? बादल का रंग नीला क्यों होता है? सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय आकाश लाल क्यों दिखता है? इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए सर्वप्रथम वह अपने अर्जित ज्ञान के आधार पर समस्याओं को ठीक से समझने का प्रयास करता है तथा उसकी व्याख्या सीमित शब्दों में करता है। इस तरह समस्या का निर्धारण होता है।
5. **समस्या से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्र कर उनका वर्गीकरण करना-** समस्या के निर्धारण के पश्चात् वैज्ञानिक समस्या से सम्बन्धित तथ्य या आंकड़े विभिन्न स्रोतों- शब्दकोष, पुस्तकालय, मॉडल, क्षेत्रीय

भ्रमण आदि से एकत्रित करता है। फिर उनका वर्गीकरण बहुत ही सावधानी, सूझबूझ और कौशल से करता है।

6. **परिकल्पना का निर्माण-** सभी प्रकार के तथ्यों एवं आंकड़ों को एकत्र कर वैज्ञानिक सोचता है कि समस्या के सम्भावित समाधान क्या-क्या हो सकते हैं? वैज्ञानिक उन सभी समाधानों में से एक सर्वाधिक उपयुक्त सम्भावित हल का चयन करता है। इसे परिकल्पना कहते हैं। इसकी पुष्टि बाद में प्रयोग द्वारा की जाती है।
7. **प्रयोग के आधार पर परिकल्पना की सत्यता की जाँच करना-** वैज्ञानिक परिकल्पना की सत्यता की जाँच करने के लिए अनेक प्रयोग करते हैं। प्रयोग क्या है? कैसे किया जाए? इसकी विस्तृत योजना वैज्ञानिक सोच-विचार करके बनाते हैं। अब प्रयोगों से प्राप्त प्रेक्षणों को सारणीबद्ध करते हैं। इन प्रेक्षणों का अध्ययन कर, अध्ययन के आधार पर ग्राफ बनाकर, गणना कर अथवा चित्र बनाकर निष्कर्ष निकालने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार प्राप्त निष्कर्ष यदि परिकल्पना के अनुरूप नहीं होते हैं तो वैज्ञानिक अपने प्रयोगों को पुनः नवीन विधाओं से दोहराते हैं। जब प्रयोगों से प्राप्त प्रेक्षण परिकल्पना के अनुरूप होते हैं तब भी वह प्रयोगों को अनेक बार दोहराते हैं और देखते हैं कि प्रत्येक बार निष्कर्ष एक ही आते हैं या नहीं। जब परिणाम एक से आते हैं और परिकल्पना के अनुरूप होते हैं तब सिद्धांत और नियमों का प्रतिपादन होता है।
8. **निष्कर्ष निकालना तथा सिद्धांत का प्रतिपादन करना-** परिकल्पना की प्रायोगिक पुष्टि के बाद सिद्धांत एवं नियम बनते हैं। कभी-कभी ये सिद्धांत समीकरणों द्वारा भी व्यक्त किये जाते हैं। प्रयोगों द्वारा पुष्टि एवं समीकरण में व्यक्त निष्कर्ष नियमों का रूप ले लेते हैं। जैसे- न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का नियम, आइंस्टाइन के द्रव्यमान ऊर्जा का नियम आदि।
9. **नवीन परिस्थितियों में ज्ञान का उपयोग-** विद्यार्थियों को सिद्धांत या नियम को दैनिक जीवन में उपयोग करना चाहिए ताकि कक्षा की परिस्थिति एवं वास्तविक जीवन की परिस्थिति में अंतर दूर किया जा सके। उदाहरणार्थ- यदि बच्चों को दबाव एवं क्वथनांक में भेद मालूम होगा तो वे पहाड़ों पर दाल या चावल शीघ्र न पकने के कारण को भली-भाँति जान सकेंगे।

1.5.1 वैज्ञानिक विधि के प्रयोग-

चूंकि वैज्ञानिक चिंतन ही वैज्ञानिक विधि है अतः किसी समस्या हेतु इसे निम्नलिखित रूप में प्रयोग किया जाता है-

1. अवलोकन करना
2. अवलोकन कर लिखना
3. वर्गीकरण करना
4. सामान्यीकरण
5. परीक्षण
6. मापन
7. प्रयोग करना
8. संख्या या मात्रा (Quantity) का उपयोग

9. दूरी तथा समय में सम्बन्ध।

1.5.2 वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता एवं इससे उत्पन्न प्रवृत्तियाँ-

वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता के निम्नलिखित रूप हैं:

1. घटनाओं व वस्तुओं के प्राकृतिक कारण की तलाश करना।
2. दिखाई देने वाली वस्तुओं के प्रति जिज्ञासा रखना।
3. दूसरों के कार्यों तथा विचारों के प्रति उदार मनोवृत्ति रखना।
4. प्रयुक्त शैलियों और प्रक्रियाओं का मूल्यांकन करना।
5. पर्याप्त प्रमाणों पर अपने विचारों तथा निष्कर्ष को आधारित करना।

वैज्ञानिक विधि उत्पन्न होने एवं उसके प्रयोग से निम्नांकित प्रवृत्तियाँ बच्चों में आ जाती हैं:

1. बच्चों में आसपास के वातावरण के प्रति जिज्ञासा जाग्रत होती है।
2. बच्चा क्रमबद्ध एवं तर्कयुक्त ढंग से विचार करता है।
3. बच्चा कारण तथा तथ्य में विश्वास करने लगता है।
4. वैज्ञानिक जिज्ञासाओं की तृप्ति करता है।
5. धैर्य, निष्पक्षता, सत्यता तथा न्यायप्रियता से कार्य करने लगता है।

1.5.3 वैज्ञानिक विधि के गुण-

1. किसी समस्या के बारे में सोचने व चिंतन करने तथा अवयवों, तथ्यों के आधार पर अनुमान द्वारा उसका हल ढूंढने का अवसर वैज्ञानिक विधि में मिलता है।
2. वैज्ञानिक विधि का उपयोग करने से **वैज्ञानिक दृष्टिकोण** विकसित होता है।
3. दैनिक जीवन की अनेक समस्याएँ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हल की जा सकती हैं।
4. समस्याओं का हल व्यावहारिक होता है।
5. इस विधि से विद्यार्थियों को कारण एवं प्रभाव की जानकारी मिलती है।
6. इस विधि में छात्र की सक्रियता बनी रहती है।
7. इस विधि में अनुभव और अवलोकन के आधार पर ज्ञान प्राप्त किया जाता है।

1.6 वैज्ञानिक दृष्टिकोण व अभिवृत्ति

पिछले खंड में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की चर्चा की गयी है। इस संदर्भ में नेशनल सोसाइटी ऑफ़ दि स्टडी ऑफ़ एजुकेशन 1960 के अनुसार, "सहज जिज्ञासा, उदार मनोवृति, सत्य के प्रति निष्ठा, अपनी कार्य-पद्धति में पूर्ण विश्वास और अपने परिणाम अथवा अंतिम विचारों की सत्यता को प्रयोग में लाकर प्रमाणित करना आदि गुण वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अंतर्गत आते हैं"। एक व्यक्ति में वैज्ञानिक दृष्टिकोण है यदि:

1. वह निष्पक्ष एवं उदारमति है।
2. वह सही ज्ञान को ग्रहण करने तथा सत्य की खोज करने की इच्छा रखता है।
3. वह अपने प्रयास के द्वारा ज्ञान प्राप्त करने की अपनी योग्यता में विश्वास रखता है।
4. वह वैज्ञानिक विधि से समस्या के समाधान की योग्यता रखता है।

5. उसकी सहज जिज्ञासा है।
6. वह कारण तथा तथ्य में विश्वास रखता है।
7. वह सत्य के प्रति निष्ठा रखता है।

वैज्ञानिक अभिवृत्ति वाले व्यक्ति में भी उपरोक्त सभी विशेषताएं होती हैं। अतः अब प्रश्न उठता है कि वैज्ञानिक स्वभाव वाले व्यक्ति में कौन-कौन सी विशेषताएं होनी चाहियें? जब इस प्रश्न पर विज्ञान की एक गोष्ठी जिसका शीर्षक था – "वैज्ञानिक अभिवृत्ति व वैज्ञानिक स्वभाव", में चर्चा हुई तो यह निष्कर्ष निकला कि वैज्ञानिक स्वभाव वाले व्यक्ति में भी उपरोक्त सभी विशेषताएं होती हैं। अतः वैज्ञानिक अभिवृत्ति व वैज्ञानिक स्वभाव दोनों लगभग समान हैं।

'अभिवृत्ति' सोचने का या आचरण करने का एक ढंग है। 'स्वभाव' बुद्धि की एक अवस्था है। यदि किसी व्यक्ति की बुद्धि की अवस्था वैज्ञानिक है तो उसके सोचने व आचरण करने का ढंग भी वैज्ञानिक ही होगा।

उदाहरण- यदि कोई व्यक्ति दूसरों के कहे अनुसार तब तक आचरण नहीं करता जब तक उसे स्वयं यह विश्वास नहीं हो जाता कि दूसरा ठीक कह रहा है, तो वह वैज्ञानिक स्वभाव वाला व्यक्ति है।

छात्रों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति को विकसित करना, तथा उनकी सोच को वैज्ञानिक बनाना विज्ञान शिक्षण का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इस क्षेत्र में विज्ञान-शिक्षक की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। इन गुणों का बच्चों में विकास करने में विज्ञान-शिक्षक निम्न प्रकार से सहायक सिद्ध हो सकते हैं:

1. छात्रों की जिज्ञासा को संतुष्ट करें।
2. उचित प्रमाण की सहायता से अंधविश्वास व मनगढ़ंत धारणाओं का खंडन करें।
3. सोचने व निर्णय करने के ढंग को वस्तुनिष्ठ बनाएं।
4. विज्ञान-शिक्षक अपने पढ़ाने का ढंग वैज्ञानिक बनाएं।
5. छात्रों द्वारा पूछे नए प्रश्नों का उत्तर धैर्यपूर्वक दें।
6. छात्रों को अधिक-से-अधिक प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करें।
7. छात्रों की विज्ञान के प्रति रुचि बढाएं।
8. अध्यापक स्वयं अपना उदाहरण प्रस्तुत करें।
9. विज्ञान-शिक्षण में अन्य संसाधनों का उपयोग करें।
10. कक्षा का वातावरण उत्सुकता और जिज्ञासा हेतु प्रेरणादायी हो।
11. विज्ञान-शिक्षण को कक्षा तक सीमित न रखें। समय-समय पर विज्ञान-सम्बन्धी पाठ्येतर क्रियाओं, जैसे- भ्रमण, विज्ञान-मेला, प्रदर्शनी, विज्ञान-गोष्ठी, स्वयं निर्मित उपकरणों का निर्माण और विज्ञान संग्रहालय का आयोजन करें।
12. छात्रों में विज्ञान के साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करें।
13. विज्ञान क्लब की स्थापना करें और अधिक-से-अधिक छात्रों की इसमें रुचि उत्पन्न करें।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि विज्ञान गतिशील है। यह परिवर्तनशील है। तथ्यों को एकत्रित करने का ढंग एवं विधि, जो एक वैज्ञानिक अपनी समस्या के समाधान के लिए अपनाता है, वैज्ञानिक

विधि, वैज्ञानिक दृष्टीकोण व वैज्ञानिक स्वभाव आदि प्रक्रिया की श्रेणी में आते हैं। विज्ञान का मूल उद्देश्य छात्रों को विभिन्न अनुभव देकर उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण को जन्म देना है।
अब हम विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विषय में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करेंगे तथा यह समझने की चेष्टा करेंगे कि भौतिकीय विज्ञान का एक अनुशासन के रूप में विकास कैसे हुआ।

अपनी प्रगति की जाँच करें

4. वैज्ञानिक विधि के विभिन्न चरणों की व्याख्या करें।

____

____

आप एक विज्ञान शिक्षक के तौर पर अपने छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए किस तरह के प्रयास करेंगे?

____

____

1.7 विज्ञान की शाखाएँ

समय समय पर विज्ञान विषय के अध्ययन को विभिन्न उपविषयों में विभाजित करने की चेष्टा की जाती रही है। भौतिक शास्त्र (Physics), रसायन शास्त्र (Chemistry), जंतु विज्ञान (Zoology), वनस्पति विज्ञान (Botany), सूक्ष्म जैविकी (Microbiology), नक्षत्र विज्ञान (Astronomy), औषधि विज्ञान (Medical science) आदि उपविषयों का सम्बन्ध विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से है। इन शाखाओं के अंतर्गत किया गया अध्ययन हमें अपने आपको तथा अपने परिवेश को बारीकी से समझने में अपने-अपने ढंग से सहायता करता है।

1.8 भौतिक विज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भौतिक विज्ञान अथवा भौतिकी, प्राकृतिक विज्ञान की एक विशाल शाखा है। कुछ विद्वानों के मतानुसार यह ऊर्जा विषयक विज्ञान है और इसमें ऊर्जा के रूपांतरण तथा उसके द्रव्य संबंधों की विवेचना की जाती है। इसके द्वारा प्राकृत जगत और उसकी भीतरी क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। स्थान, काल, गति, द्रव्य, विद्युत, प्रकाश, ऊष्मा तथा ध्वनि इत्यादि अनेक विषय इसकी परिधि में आते हैं। यह विज्ञान का एक प्रमुख विभाग है। इसके सिद्धांत समूचे विज्ञान में मान्य हैं और विज्ञान के प्रत्येक अंग में लागू होते हैं। इसका क्षेत्र विस्तृत है और इसकी सीमा निर्धारित करना अति दुष्कर है।
विज्ञान और दर्शन के बीच हमेशा ही तर्क वितर्क की स्थिति रही है। बहुत पहले इसको दर्शन शास्त्र का अंग मानकर नैचुरल फिलॉसोफी या प्राकृतिक दर्शनशास्त्र कहते थे, किंतु 1870 ई. के लगभग इसको वर्तमान नाम भौतिकी या फिजिक्स द्वारा संबोधित करने लगे। आज हमें यह शायद अचरज लगे लेकिन जब भौतिकी या गणित गहराई में उतरता है तो दर्शन में प्रवेश करता है। लगभग 16वीं सदी तक बहुत कम विचारक ऐसे हुए, जिनकी रूचि वैज्ञानिक समस्याओं के हल करने में रही हो। इसका मुख्य कारण उन दिनों धार्मिक एवं रूढ़िवादी लोगों का

कड़ा अनुशासन रहा। उन दिनों कोई भी व्यक्ति धर्म के विरुद्ध जाकर किसी बात का वैज्ञानिक विश्लेषण करने का साहस ही नहीं कर सकता था। समझने के लिए हम दर्शन के इतिहास को तीन भागो में बाँट सकते है:-

1. प्राचीन दर्शन
2. इसाइयत के उदय के बाद धार्मिक दर्शन
3. विज्ञान के युग के प्रारंभ के पश्चात् जन्मा आधुनिक दर्शन

प्राचीन दर्शन ईसा पूर्व का समय है। इसमें ग्रीक दार्शनिकों का योगदान था। इसमें पाइथागोरस, हेराक्लाइटस, इनक्सा, गोरस आदि वैज्ञानिक थे। यह वह समय था जब चीजें संयुक्त थी, जीवन बंटा नहीं था। पाइथागोरस गणितज्ञ था और दार्शनिक भी था। ग्रीक दार्शनिकों ने जो गणित और ज्यामिती में खोजें की, उसका प्रभाव संगीत, खगोल विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान और दर्शन पर पड़ा। पाइथागोरस के साथ गणित, विज्ञान और धर्म का समन्वय शुरू हुआ। सत्रहवीं शताब्दी ने एक समग्र छलांग (क्वांटम लीप) लगाई। इससे मानव जीवन ही नहीं पूरी पृथ्वी की शक्ल ही बदल गयी। इस सदी में चार ऐसे प्रमुख वैज्ञानिक हुए जिन्होंने विज्ञान युग की नींव रखी- कोपरनिकस, कैपलर, गैलीलियो और न्यूटन। इस वैज्ञानिक वातावरण ने एक नए किस्म के दर्शन को जन्म दिया - वैज्ञानिक दर्शन, जिसका प्रभाव व्यापक रूप से मनुष्य की मानसिकता पर पड़ा।

अतः भौतिकी को मोटे रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। 1900 ई. से पूर्व जो भौतिकीय ज्ञान अर्जित किया गया था और तत्संबंधी जो नियम तथा सिद्धांत प्रतिपादित किए गए थे, उनका समावेश चिरसम्मत भौतिकी में किया गया। उस समय की विचारधारा के प्रेरणास्रोत गैलिलियो (1564-1642 ई.) तथा न्यूटन (1642-1727 ई.) थे। अब तक पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र थी, मगर गैलीलियो ने यह साबित किया कि पृथ्वी सूरज का चक्कर लगा रही है। चिरसम्मत भौतिकी को मुख्यत: यांत्रिकी (मैकैनिक्स), ध्वनिकी (अकौस्टिक्स), ऊष्मा, विद्युतचुंबकत्व और प्रकाशिकी (ऑप्टिक्स) में विभाजित किया जाता है। ये शाखायें इंजीनियरिंग तथा शिल्प विज्ञान की आधारशिलाएँ हैं और भौतिकी की प्रारंभिक शिक्षा इनसे ही शुरू की जाती है।

1900 ई. के पश्चात् अनेक क्रांतिकारी तथ्य ज्ञात हुए, जिनको चिरसम्मत भौतिकी के ढाँचे में बैठाना कठिन है। इन नये तथ्यों के अध्ययन करने और उनकी गुत्थियों को सुलझाने में भौतिकी की जिस शाखा की उत्पत्ति हुई, उसको आधुनिक भौतिकी कहते हैं। आधुनिक भौतिकी का द्रव्यसंरचना से सीधा संबंध है। अणु, परमाणु, केंद्रक (न्युक्लियस) तथा मूल कण इनके मुख्य विषय हैं। भौतिकी की इस नवीन शाखा ने वैज्ञानिक विचारधारा को नवीन और क्रांतिकारी मोड़ दिया है तथा इससे सामाजिक विज्ञान और दर्शनशास्त्र भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुए हैं। धीरे-धीरे यह विज्ञान उन्नति कर रहा है और इससे अनेक महत्वपूर्ण शाखाओं की उत्पत्ति हुई है, जैसे रासायनिक भौतिकी, तारा भौतिकी, जीवभौतिकी, भूभौतिकी, नाभिकीय भौतिकी, आकाशीय भौतिकी इत्यादि।

1.9 विद्यालय पाठ्यक्रम में भौतिकीय विज्ञान का महत्व एवं स्थान

ज्ञान अविभाजित होता है। अध्ययन-अध्यापन की सुविधा की दृष्टि से उस संगठित ज्ञान को कई समूहों में विभाजित कर लिया गया है। इन प्रत्येक भागों को हम ‘विषय’ कहते हैं। ज्ञान को क्रमबद्ध करके पाठ्यक्रम में अनेक प्रकार के विषयों का निर्माण किया जाता है लेकिन ये विषय परस्पर किसी न किसी रूप में एक-दूसरे से अवश्य जुड़े रहते हैं या समन्वय रहता है। यदि यह कहा जाए कि अन्य विषयों को विज्ञान के बिना नहीं पढ़ाया जा सकता है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। एक क्षेत्र के अभाव में दूसरे क्षेत्र को पूर्ण रूप से समझना छात्र तथा

अध्यापक दोनों के लिए कठिन होता है। भौतिक विज्ञान सहित सभी प्रकार के विज्ञान के ज्ञान को आज हमारे स्कूलों के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य विषय बनाकर उचित महत्व दिया जा रहा है। यही नहीं, विज्ञान और तकनीकी की पढ़ाई पर दिनों-दिन जोर दिया जा रहा है और कहा जाता है कि अगर देश को आगे बढ़ाना है तो हमें इन विषयों के स्तर को ऊँचा उठाना होगा तथा इन पर प्रारम्भिक कक्षाओं से ही पूरा-पूरा ध्यान देना होगा। कोठारी आयोग ने अपने सुझाव देते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा था "हमारी दृष्टि से विज्ञान को विद्यालय पाठ्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग बनाने पर बहुत ज़ोर दिया जाना चाहिए। हम इसलिए यह सिफारिश करते हैं कि विद्यालयों में प्रदत्त प्रथम दस वर्षों की सामान्य शिक्षा के अंतर्गत विज्ञान और गणित दोनों की शिक्षा सभी विद्यार्थियों को अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए।"

1.10 भौतिकीय विज्ञान का विज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्ध

आज के युग में विज्ञान का अध्ययन ऐसे शिखर पर पहुँच गया है कि विज्ञान की किसी भी शाखा का अध्ययन दूसरी शाखाओं से अलग रखकर करना संभव नहीं है। भौतिकीय विज्ञान के इस पाठ्यक्रम से यहाँ आशय भौतिक विज्ञान एवं रसायन विज्ञान से है। यहाँ हम भौतिक विज्ञान का रसायन विज्ञान तथा विज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्ध पर प्रकाश डालेंगे।

भौतिक विज्ञान विषय अब जीव विज्ञान एवं रसायन शास्त्र विषयों के सापेक्ष में पढ़ा जाने लगा है। विज्ञान के जितने भी क्षेत्र हैं, जैसे- भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, कृषि विज्ञान, भू-विज्ञान - ये सब परस्पर सम्बन्धित हैं। एक क्षेत्र के ज्ञान के अभाव में दूसरे क्षेत्र को पूर्ण रूप से नहीं समझा जा सकता। रसायन विज्ञान में यदि हम पानी की सफ़ाई के सम्बन्ध में अध्ययन करते हैं तो भौतिकीय विज्ञान में उसी पानी घर की मशीनों के सम्बन्ध में पढ़ते हैं जहाँ पानी की सफ़ाई की जाती है और जीव विज्ञान तथा वनस्पति विज्ञान में यह अध्ययन करते हैं कि जीव-जन्तु तथा पौधों के लिए पानी क्यों आवश्यक है। अध्यापक का कर्तव्य है कि वह विज्ञान की विभिन्न शाखाओं को समन्वित करके पढ़ाए। भौतिकीय विज्ञान पढ़ाते समय यदि रसायन विज्ञान का उल्लेख आ जाता है तो अध्यापक को ऐसी दशा में रसायन विज्ञान पर भी प्रकाश डालना चाहिए। पत्तियों द्वारा प्रकाश से कार्बन लेना भौतिकीय विज्ञान तथा वनस्पति विज्ञान के परस्पर सम्बन्ध की ओर संकेत करता है। अर्थात् सभी उप-विषय एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं-

1. **भौतिक विज्ञान तथा जीव विज्ञान के मध्य सम्बन्ध**- यद्यपि भौतिक विज्ञान तथा जीव विज्ञान की प्रकृति एक-दूसरे से भिन्न है। फिर भी हम इन दोनों विषयों में अटूट सम्बन्ध देख सकते हैं। उदाहरणार्थ- बच्चों को यह पढ़ाया जाता है कि आँख की बनावट फोटो कैमरे से मिलती है। जीव विज्ञान में हम आँख की रचना तथा दृष्टिदोषों को दूर करने के लिए तल (lens) के उपयोग की व्याख्या करते हैं। इस प्रकार भौतिक विज्ञान तथा वनस्पति विज्ञान में भी यह सम्बन्ध देखा जा सकता है। पेड़-पौधों में जड़ों द्वारा भूमि से जल तथा खनिज लवणों का शोषण किया जाता है तथा पत्तियों द्वारा उत्स्वेदन (Transpiration) की क्रिया एक प्रकार के चूषण बल के द्वारा होती है जिसे भौतिक विज्ञान स्पष्ट करता है। जीव विज्ञान के अध्ययन में भौतिक विज्ञान के उपकरणों, जैसे- सूक्ष्मदर्शी, तापमापी आदि का उपयोग एक-दूसरे की आपसी निर्भरता को व्यक्त करते हैं।
2. **भौतिक विज्ञान तथा रसायन विज्ञान के मध्य सम्बन्ध-** भौतिक विज्ञान तथा रसायन विज्ञान, दोनों ही विज्ञान की शाखाएँ हैं और इन दोनों में गहरा सम्बन्ध है, उदाहरणार्थ- यदि रसायन विज्ञान में ऑक्सीजन गैस

तैयार करने के विषय में अध्ययन करते हैं तब उसमें यह बताया जाता है कि ऑक्सीजन गैस तैयार करने के पश्चात् निकास नली को जल से अलग कर देनी चाहिए। इस सावधानी के अन्दर भौतिक विज्ञान का कारण है क्योंकि यदि पहले बर्तन को हटा दिया जाएगा तो ताप गिरने से गैस ठंडी होकर सिकुड़ेगी। इससे गैस का दाब कम हो जाएगा और पानी ऊपर खींचकर परखनली में पहुँच जाएगा। इससे सम्भव है परखनली टूट जाए। भौतिक विज्ञान में हम विभिन्न प्रकार के सेल, जैसे- वॉलटाइक सेल, आदि का अध्ययन करते हैं। वॉलटाइक सेल में हम सल्फ्यूरिक अम्ल लेते हैं जो कि जस्ते की पट्टिका से क्रिया करके हाइड्रोजन गैस उत्पन्न करता है। इस विषय में पढ़ाते समय विज्ञान के शिक्षक के लिए रसायन विज्ञान का ज्ञान आवश्यक है।

भौतिक विज्ञान का सम्बन्ध न सिर्फ विज्ञान के विभिन्न उप-विषयों से है बल्कि आज वह हमारे दैनिक जीवन का भी अभिन्न अंग बन गया है। अब विज्ञानरहित संसार की कल्पना भी असंभव है। मानव-जीवन का प्रत्येक पक्ष विज्ञान से प्रभावित है। अगले भाग में हम भौतिकीय विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज में पारस्परिक सम्बन्ध पर चर्चा करेंगे।

अपनी प्रगति की जाँच करें

5. भौतिकीय विज्ञान के एक अनुशासन के रूप में विकास पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान परिपेक्ष्य में विद्यालयों के पाठ्यक्रम में इसके स्थान पर टिपण्णी कीजिए।

____

6. विज्ञान के विभिन्न उप-विषयों के सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण किस प्रकार किया जाना चाहिए? इस पर अपने विचार व्यक्त करें।

____

1.11 विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज के मध्य पारस्परिक निर्भरता

आज की दुनिया के छोटे-से-छोटे कार्य से लेकर बड़े-से-बड़े कार्य विज्ञान द्वारा संचालित हो रहे हैं। कार्य करने तथा रहन-सहन के हमारे ढंग सभी वैज्ञानिक साधनों पर आधारित होने लगे हैं और हमारा जीवन विज्ञानमय होकर पूर्ण रूप से आधुनिक विज्ञान पर ही आश्रित हो गया है। दिन-प्रतिदिन बदलते हुए समाज में जिस तरह से विज्ञान निरंतर परिवर्तन ला रहा है, उसमें अपने आपको ठीक तरह से व्यवस्थित करने के लिए विज्ञान सम्बन्धी साधारण ज्ञान तथा नवीन आविष्कारों और साधनों की जानकारी होना अति आवश्यक है। हरबर्ट स्पेंसर का यह कथन बिलकुल उचित प्रतीत होता है कि "विज्ञान के अध्ययन से जो ज्ञान हमें मिलता है, वह हमारे जीवन के मार्गदर्शन में अन्य बातों के ज्ञान से कहीं अधिक उपयोगी है।"

आज हमारे दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र (यातायात, शिक्षा, मौसम, संचार, व्यवस्था, कृषि, चिकित्सा, मनोरंजन आदि) में विज्ञान ने हमारे कार्यों को और आसान व सुलभ बना दिया है। सुबह उठने से रात्रि में सोने तक हमारी दिनचर्या को विज्ञान की शाखाओं के अनुप्रयोग, युक्तियों व तकनीकी ने अपने प्रभाव में जकड़ लिया है। हम सुबह उठते ही टूथ ब्रश, टूथ-पेस्ट, साबुन, गीज़र, सिंथेटिक तौलिया, वस्त्र (टेरोलीन, नायलोन, एक्राइलिक, आरलॉन आदि से निर्मित), प्लास्टिक से बने बर्तन, रसोईघर में खाना बनाने के लिए द्रव्य, पेट्रोलियम गैस,

माइक्रोवेव ओवन, बिजली की भट्ठी, मिक्सर, रेफ्रिजरेटर आदि का उपयोग, काम पर जाने हेतु स्कूटर, कार, आदि, संचार हेतु टेलीफोन, मोबाइल, टेलीविज़न, कंप्यूटर, आदि पढ़ाई व ज्ञान अर्जित करने के लिए इन्टरनेट का उपयोग करने लगे हैं।

उद्योग, परिवहन, सम्प्रेषण, औषधि, अभियांत्रिकी, मनोरंजन एवं शिक्षा आदि के क्षेत्र में निहित प्रौद्योगिकी विज्ञान की ही देन है। समाज के विभिन्न वर्गों से सम्बंधित लोग इस प्रौद्योगिकी का उपयोग करके लाभान्वित होते हैं। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, समाज एवं शिक्षा एक अन्योन्याश्रित जाल या तंत्र का निर्माण करते हैं जिसे नष्ट होने से बचाने के लिए इनमें एक संतुलन बनाने की आवश्यकता है ताकि समाज का स्थायी व टिकाऊ विकास संभव हो सके। दैनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की उपयोगिता निम्न प्रकार है:

1. **चिकित्सा एवं स्वास्थ्य-** रोगों की पहचान, निराकरण, बीमारियों के उन्मूलन आदि के क्षेत्र में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी द्वारा अभूतपूर्ण सफलता अर्जित की गई है। एलोपैथी, आयुर्वेद, होमियोपैथी पद्धतियों द्वारा विभिन्न रोगों का उपचार करने में सफलता प्राप्त हुई है। रोगों की जाँच के लिए एक्स-रे, लेज़र, सी. टी. स्कैन, अल्ट्रा सोनोग्राफी, एण्डोस्कोप आदि का प्रयोग किया जाता है तथा शल्य चिकित्सा में आधुनिक विधियाँ काम में ली जाती हैं। उदाहरण के तौर पर लेज़र द्वारा दृष्टिदोष, पथरी रोग, मोतियाबिंद तथा कैंसर आदि का उपचार किया जाता है।
2. **कृषि-** कृषि क्षेत्र में उन्नत फसलों व बीजों को प्राप्त करने के लिए उर्वरकों की आवश्यकता होती है। उपयुक्त उर्वरकों का प्रयोग किये जाने के कारण भारत देश खाद्यान्न में आत्मनिर्भर हो चुका है। आधुनिक कृषि में यंत्रों एवं उन्नत बीजों के उपयोग से कम समय में अधिक अन्न एवं फसलों का उत्पादन होता है। फसलों को बीमारियों से बचाने के लिए प्रयोग किये जाने वाले कीटनाशक प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान के समन्वय की देन हैं।
3. **मनोरंजन-** टेपरिकॉर्डर, वीडियो, मल्टीमीडिया, इन्टरनेट, कंप्यूटर, आदि ने हमारे दैनिक जीवन पर अपनी छाप लगा दी है। इससे व्यक्ति घर बैठे-बैठे कई प्रकार के खेल कंप्यूटर पर ही खेल सकता है।
4. **सूचना-** टेलीफोन, मोबाइल, उपग्रह, रॉकेट, इन्टरनेट, फैक्स मशीन आदि ने सूचना के क्षेत्र में क्रांति ला दी है। इन उपकरणों का प्रयोग कर कम समय में अधिक सूचना आवश्यकतानुसार उपलब्ध हो जाती है। कंप्यूटर की उपयोगिता पढ़ाई, चित्रण, जानकारी, मनोरंजन, इन्टरनेट, मल्टीमीडिया आदि क्षेत्रों में सिद्ध हो चुकी है। इसका प्रयोग विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों में किया जाता है जिससे शिक्षा रुचिकर एवं आसान हो गयी है। बैंकों, उद्योगों, कार्यालयों, बस स्टैंड, रेलवे स्टेशन आदि पर सूचनाओं तथा हिसाब-किताब रखने में कंप्यूटर का प्रयोग किया जाता है।
5. **यातायात-** विज्ञान की खोजों के द्वारा हज़ारों किलोमीटर दूर कम समय में पहुंचा जा सकता है। मोटर, वायुयान, कार, साइकिल आदि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के मिलन की ही देन हैं जिन्होंने मानव जीवन को सुगम तो बनाया ही है साथ में समाज के विभिन्न वर्गों को एक-दूसरे के करीब भी कर दिया है।
6. **व्यापार-** हमारे दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओं का निर्माण व्यवसायों के विकास में सहायक है। सीमेंट, काँच, साबुन, कपड़ा, रंग, तेल, पेंट, वॉर्निश, सिल्क, नायलोन, कास्टिक सोडा, विद्युतीय यंत्र आदि का निर्माण व उपयोग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के कारण ही संभव है।

7. अतः हम यह कह सकते हैं कि विज्ञान को प्रौद्योगिकी एवं समाज से जोड़कर पढ़ाने से (STS Approach-Science, Technology, Society Approach) विद्यार्थियों में विज्ञान के प्रति अभिरुचि का विकास होता है तथा वे विज्ञान की विभिन्न उपलब्धियों के प्रति जागरूक रहते हैं। वे विज्ञान की उपलब्धियों की सराहना करने में सक्षम बन जाते हैं। अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उपयोग कर पाते हैं। साथ ही वे अंध विश्वासों, जादू टोना आदि पर विश्वास न कर साक्षात् अनुभव का उपयोग करते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच करें

"विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान का एक अनिवार्य विषय के रूप में अध्ययन व्यक्ति और समाज दोनों की दृष्टि से ही निस्संदेह बहुत उपयोगी है।" इस कथन के औचित्य की समीक्षा कीजिए।

____

____

1.12 सारांश

विज्ञान गतिशील एवं परिवर्तनशील है। अतः इसके अध्ययन के लिए वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करके किसी निष्कर्ष तक पहुँचा जाता है। इस विधि का प्रयोग करने वाले व्यक्ति में वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति का विकास होता है। समकालीन परिप्रेक्ष्य में भौतिकीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के समन्वय से समाज के कल्याण हेतु कई सारी उपलब्धियाँ हुई हैं जिनका ज्ञान अध्यापक एवं छात्रों दोनों को होना अनिवार्य है क्योंकि इससे उनकी इस विषय में रुचि बढ़ती है। विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण समन्वित उपागम के माध्यम से ज्यादा प्रभावशाली होता है। अतः इसके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक को विज्ञान के विभिन्न उप-विषयों जैसे भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र एवं जीव विज्ञान के सह-सम्बन्धों की समझ हो।

1.13 अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

1. 1.3 विज्ञान क्या है?
2. 1.4 विज्ञान की प्रकृति
3. 1.5 वैज्ञानिक विधि
4. 1.6 वैज्ञानिक दृष्टिकोण व अभिवृत्ति
5. 1.8 भौतिकीय विज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि,
   1.9 विद्यालय पाठ्यक्रम में भौतिकीय विज्ञान का महत्व एवं स्थान
6. 1.10 भौतिकीय विज्ञान का विज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्ध
7. 1.11 विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज में अंतर-सम्बन्ध

1.14 संदर्भ पुस्तकें

ओबराय, एस. सी.- 'शिक्षण-अधिगम के मूल तत्व, शोभित प्रकाशन, भिवानी 1998.

पाण्डेय, शशिकिरण- ‘विज्ञान शिक्षण’, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
मंगल, एस. के- 'जीव विज्ञान शिक्षण’, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 2012.
शर्मा, आर. ए.- 'शिक्षण अधिगम के मूल तत्व’, लॉयल बुक डिपो, मेरठ, 1989.
शर्मा,एच. एस., तिवारी, ए. एवं पराशर, आर. -'विज्ञान शिक्षण के नए आयाम', राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा, 2007.
शर्मा, रवीन्द्र कुमार- 'शिक्षण अधिगम के मूल तत्व’, श्री राम पब्लिकेशन, भिवानी, 2000.

इकाई-2
विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान की समृद्धि के लिए परिप्रेक्ष्य का विकास

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम पर आधारित विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने की आवश्यकता तथा महत्त्व
2.3 गतिविधियों का आयोजन
विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए विज्ञान कार्यगोष्ठी/संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब आदि
2.3.1 विज्ञान कार्यगोष्ठी/संगोष्ठी
2.3.2 विज्ञान कार्यशाला
2.3.3. विज्ञान क्लब
2.4 सारांश
2.5 अभ्यास प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर आप –

1. माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान की समृद्धि के लिए परिप्रेक्ष्य के निर्माण की आवश्यकता तथा महत्त्व की आलोचनात्मक समझ विकसित कर सकेंगे।
2. विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने के लिए विद्यालय में आयोजित की जानेवाली गतिविधियों जैसे संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब आदि के संगठन तथा आयोजन की समझ विकसित कर सकेंगे।
3. विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए विज्ञान संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब आदि गतिविधियों के प्रारूप का निर्माण कर सकेंगे।
4. विज्ञान संगोष्ठी, कार्यशाला तथा विज्ञान क्लब आदि गतिविधियों के उद्देश्यों की विज्ञान के विषय ज्ञान की समृद्धि के संदर्भ में समीक्षा कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे नए-नए आविष्कारों तथा ज्ञान के विकास से अवगत कराने तथा विज्ञान का महत्त्व तथा इसके द्वारा विभिन्न मूल्यों के विकास की गहरी समझ विकसित करने के लिए विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने की आवश्यकता है। इसके लिए विज्ञान पाठ्यक्रम के संप्रत्ययों को विद्यार्थियों के वास्तविक जगत के अनुभवों तथा विज्ञान के शोध अभ्यासों के परिप्रेक्ष्य में सीखने की आवश्यकता है। इसके लिए विद्यालयों में विज्ञान संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब, विज्ञान प्रदर्शनी, विज्ञान मेला जैसी गतिविधियों का आयोजन किया जाता है। इन गतिविधियों द्वारा विज्ञान पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु के लिए परिप्रेक्ष्य का निर्माण होता है जिससे

विद्यार्थी विज्ञान के संप्रत्ययों का अनुप्रयोग दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु करते हैं तथा उसमें इन संप्रत्ययों की अंतर्दृष्टि विकसित होती है। उपर्युक्त संदर्भ में यह इकाई विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान की समृद्धि के लिए विभिन्न गतिविधियों के संगठन तथा आयोजन की विवेचना करता है।

2.2 माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम पर आधारित विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने की आवश्यकता तथा महत्त्व

विज्ञान में स्थापित ज्ञान की प्रकृति अस्थाई है यानि नए-नए अभ्यासों तथा प्रयोगों के परिणामों के आधार पर विज्ञान के संप्रत्ययों में महत्वपूर्ण बदलाव आ सकता है। अतः विज्ञान पाठ्यक्रम को, विशेषकर माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर, विज्ञान जगत में हो रहे नए-नए अभ्यासों तथा आविष्कारों से जोड़ने की आवश्यकता है, जिससे विद्यार्थी विषय-वस्तु के बदलते परिप्रेक्ष्य तथा दृष्टिकोण की समझ पैदा करें तथा उनके विषयगत ज्ञान की समृद्धि हो।

विद्यार्थी को विज्ञान की अवधारणा कैसे सिखया जाय यह सिखाने के लिए विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत विद्यार्थी द्वारा विज्ञान के प्रकरणों तथा संप्रत्ययों को वास्तविक जगत के अनुभवों से जोड़ा जाता है जिससे उनमें इन संप्रत्ययों की व्यावहारिक समझ विकसित होती है। यह विद्यार्थी को यह समझाने में सहायता करता है कि विज्ञान एक सामाजिक उद्यम है तथा किस प्रकार विज्ञान का विकास सामाजिक कारकों से प्रभावित होता है। यह विद्यार्थी को विज्ञान, समाज तथा प्रौद्योगिकी के बीच की अंतःक्रियाओं को समझने में सहायता करता है। यानि किस प्रकार समाज की आवश्यकताएँ तथा मांग विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी जगत के अभ्यासों को प्रभावित करते हैं, वहीँ दूसरी ओर किस प्रकार विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नए–नए विकास प्रौद्योगिकी जगत तथा समाज की दिशा एवं दशा को प्रभावित करते हैं। यदि विज्ञान के संप्रत्ययों को विद्यार्थी के भौतिक तथा सामाजिक परिवेश के संदर्भ में रखकर सिखाया जाता है तो विद्यार्थियों में पर्यावरण की सुरक्षा तथा स्थानीय एवं वैश्विक रोजगार जगत से जुड़े ज्ञान, कौशल तथा अभिवृतियों का विकास होता है। विज्ञान पाठ्यचर्या की विषय-वस्तु के लिए परिप्रेक्ष्य का विकास विद्यार्थी में समाज की समस्याओं तथा प्रकृति की घटनाओं के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करता है जिससे उसमें ईमानदारी, वस्तुनिष्ठता, सहयोग आदि जैसे मूल्यों का विकास होता है तथा वह समाज की कुरीतियों, पूर्वाग्रह एवं अन्धविश्वास से मुक्त हो जाता है।

विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए परिप्रेक्ष्य का विकास विज्ञान को ऐसी व्यवस्था के रूप में स्थापित करता है जहाँ प्रक्रिया उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना कि उत्पाद। यह इसकी पुष्टि करता है कि विज्ञान की प्रक्रिया वास्तविक जगत की समस्याओं के समाधान हेतु आभासीय हल, परिकल्पनाएँ, प्रयोग, निरीक्षण या पर्यवेक्षण आदि विधियों को उपयोग में लाती है। यह विद्यार्थियों में किसी भी समस्या को नियमित तथा क्रमबद्ध तरीके से हल करने की क्षमता का विकास करता है। वे इन परिणामों को दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु उपयोग में लाते है तथा सामाजिक गतिविधियों में तार्किक एवं विवेकपूर्ण सहभागिता निभाते हैं।

विषय ज्ञान के परिप्रेक्ष्य निर्माण द्वारा विद्यार्थियों में नैतिक मूल्यों का भी विकास होता है। विद्यार्थी जब विज्ञान के विषय ज्ञान की समृद्धि हेतु आयोजित गतिविधियों में सहभागिता करता है तथा अपने समूह-साथी एवं शिक्षकों को आवश्यक सहयोग प्रदान करता है तो उसमें ईमानदारी, धैर्य, स्वच्छता, समय की पाबन्दी, न्यायप्रियता,

कर्तव्यनिष्ठता, सहयोग, आत्म-नियंत्रण एवं चरित्र निर्माण जैसे नैतिक मूल्यों का संवर्धन होता है। ये गतिविधियाँ विद्यार्थियों में सांस्कृतिक मूल्यों का भी विकास करते हैं। विद्यार्थी न केवल अपनी संस्कृति व सभ्यता से परिचित होता है वरन वह सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित, उन्नत तथा भविष्य में आनेवाली पीढ़ी को हस्तांतरित करने में भी सहायता प्रदान करता है। वैज्ञानिक तथा सामाजिक समस्याओं को वैज्ञानिक अंदाज में तथा नए ज्ञान या अविष्कार द्वारा हल करने की अभिवृत्ति का विकास होता है, इसमें विज्ञान की रोचकता तथा सुन्दरता निहित होती है। विषय ज्ञान के परिप्रेक्ष्य के निर्माण द्वारा विद्यर्थियों में सृजनात्मकता तथा कला का विकास होता है। परिकल्पना द्वारा समस्याओं के समाधान हेतु अध्ययन योजना का प्रारूप तैयार करना, विभिन्न उपकरणों की व्यवस्था करना, मॉडल का निर्माण करना, विज्ञान के संप्रत्ययों के अनुप्रयोगों का चित्रण करना आदि विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति का संवर्धन करते है तथा उनकी कला संबंधी संवर्धन का संवर्धन करते हैं। इस प्रकार विज्ञान कलाओं के सृजनकर्ता तथा पोषक के रूप में भी कार्य करता है।

विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय ज्ञान के परिप्रेक्ष्य निर्माण के लिए आयोजित गतिविधियों द्वारा विद्यार्थियों में जीविकोपार्जन संबंधी मूल्यों का विकास भी होता है। यह उन्हें स्थानीय तथा वैश्विक स्तर के रोजगारों के लिए आवश्यक विज्ञान संबंधी ज्ञान तथा कौशलों से अवगत कराता है तथा उनके विकास के लिए प्रारंभिक उन्मुखीकरण भी करता है जिससे वे भविष्य में इन कौशलों के विकास के लिए उच्च शिक्षा कार्यक्रमों या व्यावसायिक कार्यक्रमों का हिस्सा बनकर रोजगार के अवसर आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। यह विद्यार्थियों में करके सीखना, अनुभव द्वारा सीखना तथा समस्या समाधान के कौशल तथा अभिवृत्ति का विकास करता है जिससे उनकी जिज्ञासा, रचनात्मक प्रवृत्तियाँ, आत्म तुष्टि, आत्म-प्रकाशन आदि मानसिक भावनाओं की तुष्टि व पुष्टि होती है। यह विद्यार्थियों में अंतराष्ट्रीय समझ, बंधुत्व एवं सौहार्द का भाव विकसित करता है क्योंकि जब विद्यार्थी विज्ञान के किसी प्रकरण पर संगोष्ठी या कार्यशाला का आयोजन करता है या उसमें सहभागिता करता है तो उसे यह पता चलता है विज्ञान के क्षेत्र का कोई ज्ञान या अविष्कार किसी स्थान या देश तक सीमित न रहकर दुनिया के सभी देशों की सभ्यता तथा संस्कृति को प्रभावित करता है। विज्ञान के क्षेत्र में किसी देश में हो रहे विकास अन्य देशों के विकास को भी महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार वे स्वयं को विज्ञान जगत के अंतरराष्ट्रीय धरातल पर खड़ा पाते है, जहाँ वे अपने देश के साथ-साथ अन्य देशों के विज्ञान संबंधी ज्ञान तथा आविष्कारों का उपयोग देश-विदेश की समस्याओं के विश्लेषण तथा निदान हेतु करते हैं। इन गतिविधियों द्वारा विद्यार्थियों में वस्तुनिष्ठता, धैर्य, कठोर परिश्रम, एकाग्रता, स्पष्टता, अच्छे-बुरे का ज्ञान जैसे अनुशासनपरक मूल्यों का भी विकास होता है।

विज्ञान शिक्षण में विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए परिप्रेक्ष्य का निर्माण विद्यार्थी को विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नए-नए विकास से जोड़ता है तथा उसकी विभिन्न क्षेत्रों में उपयोगिता से उन्हें अवगत कराता है। उदाहरण स्वरुप- जब 'औद्योगिक क्षेत्र में विज्ञान का अन्तःक्षेप' जैसे विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया जाता है तो विद्यार्थी यह व्यावहारिक रूप से समझ पाते हैं कि विज्ञान के ज्ञान तथा आविष्कारों ने औद्योगिक क्षेत्र के विकास को किस प्रकार प्रभावित किया है। रासायनिक शोध कार्यों के फलस्वरूप विभिन्न उद्योगों में किस प्रकार क्रान्तिकारी विकास संभव हुआ है। औषधि, साबुन, डिटर्जेंट, सौन्दर्य प्रसाधन, कपड़ा, रंग, कागज, रबर, प्लास्टिक, पेट्रोलियम, सीमेंट, कांच, सिल्क, नायलॉन, रसायन, इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ आदि का निर्माण किस प्रकार विज्ञान द्वारा संभव हुआ है।

विद्यार्थी सूचना के क्षेत्र में टेलीफ़ोन, मोबाइल, उपग्रह, राकेट, इन्टरनेट, फैक्स मशीन आदि की उपयोगिता की समीक्षा करते हैं। वे यह जानने की कोशिश करते हैं कि इन उपकरणों का उपयोग कर कम समय में अधिक सूचना कैसे उपलब्ध हो जाती है?

स्व-मूल्यांकन

1. विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य के विकास की आवश्यकता स्पष्ट करें।

2.3 विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए, विज्ञान कार्यगोष्ठी/संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब आदि का आयोजन

विद्यालयों में, विशेषकर माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर, विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान की समृद्धि के लिए कई गतिविधियों का आयोजन किया जाता है। इनके अंतर्गत विषय ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास किया जाता है। परिप्रेक्ष्य के रूप में विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन के अनुभव; सामाजिक अभ्यास जिसमें विज्ञान के संप्रत्ययों को व्यवहार में लाया जाता है जैसे-कृषि, उद्योग, खेल-कूद, चिकित्सा, मनोरंजन, सूचना प्रसारण आदि, विज्ञान की शोध गतिविधियाँ तथा विज्ञान के नए आविष्कारों एवं उत्पादों को सम्मिलित किया जाता है। पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु को विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन अनुभवों से जोड़कर, कार्यशाला/संगोष्ठी, कार्यशाला, विज्ञान क्लब, विज्ञान प्रदर्शनी, विज्ञान मेला, शैक्षणिक भ्रमण आदि गतिविधियों का आयोजन किया जाता है, जिससे विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए स्थापित एक अधिगम (Situatedlearning) वातावरण का निर्माण होता है तथा विद्यार्थियों में विषय वस्तु की अंतर्दृष्टि विकसित होती है। इन गतिविधियों द्वारा विद्यार्थियों में विषय ज्ञान की समृद्धि के साथ-साथ कई मूल्यों जैसे मानवीय एवं सामाजिक मूल्य, जीवन संबंधी कौशल, सांस्कृतिक मूल्य, पर्यावरण सुरक्षा संबंधी ज्ञान एवं कौशल आदि का भी विकास होता है। इन गतिविधियों के प्रकरण विज्ञान पाठ्यक्रम की विषय वस्तु तथा विज्ञान`के क्षेत्र में हो रहे संबंधित नए ज्ञान के विकास या आविष्कार से जुड़े होते हैं। यह प्रकरण विषय-वस्तु से संबंधित सामाजिक अभ्यास या विद्यार्थियों के वास्तविक जगत के अनुभवों से भी लिए जा सकते हैं। उदाहरण स्वरुप- 'प्रक्षेपण' विषय-वस्तु के लिए 'मिसाइल या 'राकेट परीक्षण' उदाहरण के रूप में लिए जा सकते हैं। 'प्रकाश का अपवर्तन' विषय-वस्तु के लिए 'मृग मरीचिका' या 'रेगिस्तान मरीचिका' जैसे वास्तविक अनुभव प्रकरण के रूप में लिए जा सकते हैं। इन गतिविधियों में फोकस समूह विचार-विमर्श, पैनल विचार-विमर्श, मॉडल का निर्माण, छायाचित्रों का संग्रह, सामुदायिक कैम्प या शिविर, क्षेत्र-यात्रा, वीडियो या डाक्यूमेंट्री फिल्म, नुक्कड़ नाटक, भूमिका चित्रण, अतिथि व्याख्यान आदि युक्तियों को व्यवहार में लाया जा सकता है। इन गतिविधियों के प्रारूप का निर्माण, संगठन तथा क्रियान्वयन विद्यार्थियों द्वारा विज्ञान शिक्षक तथा अन्य शिक्षकों के मार्गदर्शन में किया जाता है। ये गतिविधियाँ अंतर्विद्यालय स्तर पर भी आयोजित की जा सकती हैं।

2.3.1 विज्ञान कार्यशाला/संगोष्ठी

माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए समय-समय पर विज्ञान संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है। इसके अंतर्गत विषय-वस्तु से जुड़े कई मुद्दों तथा

समस्याओं पर चर्चा की जाती है। विषयगत ज्ञान को विज्ञान के नए विकास, चाहे वह ज्ञान हो, प्रक्रिया हो या कोई तकनीक या उपकरण से जोड़ा जाता है, जिससे विद्यार्थी के विषय ज्ञान का विस्तार होता है। साथ-ही-साथ विद्यार्थी विज्ञान के महत्त्व तथा उपयोगिता की आलोचनात्मक समझ पैदा करता है तथा जीवन के लिए उपयोगी विषय के रूप में इसकी समीक्षा करता है। विद्यार्थी भौतिकीय विज्ञान का विज्ञान के दूसरे विषयों तथा ज्ञान के कई अन्य अनुशासनों के साथ संबंध स्थापित करता है तथा विज्ञान, समाज तथा प्रोद्योगिकी के अंतःक्रिया का आलोचनात्मक विश्लेषण करता है।

विज्ञान संगोष्ठी का संगठन तथा आयोजन

विज्ञान संगोष्ठी के अंतर्गत सर्वप्रथम संगोष्ठी के प्रकरण के रूप में विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय-वस्तु से जुड़े मुद्दे या समस्या का निर्धारण किया जाता है। इसमें कई तरह की गतिविधियाँ जैसे-भाषण प्रतियोगिता, वाद-विवाद प्रतियोगिता, निबंध प्रतियोगिता, पत्र-प्रस्तुतीकरण, विचार-विमर्श, पोस्टर प्रस्तुतीकरण, मॉडल का निर्माण एवं प्रस्तुतीकरण, वास्तविक वस्तुओं का संग्रहण एवं प्रस्तुति, छाया चित्रों का संग्रहण, समुदाय के सदस्यों का संगोष्ठी के मुद्दे संबंधी विचारों का संग्रह एवं प्रस्तुति आदि। संगोष्ठी के अंतर्गत निम्नलिखित चरण आते हैं-

1. संगोष्ठी के विषय का निर्धारण - पाठ्य-पुस्तक के किसी विषय-वस्तु से जुड़े मुद्दे या समस्या का चयन विद्यार्थियों द्वारा संगोष्ठी के प्रकरण के रूप में विज्ञान शिक्षक के मार्गदर्शन में किया जाता है। उदाहरणस्वरूप- "उर्जा के वैकल्पिक स्रोत" विषय-वस्तु के लिए "सौर उर्जा का दैनिक जीवन में महत्त्व" संगोष्ठी के प्रकरण के रूप में चुना जा सकता है।
2. संगोष्ठी के उप-प्रकरणों का निर्धारण- उदाहरणस्वरुप- सोलर बैटरी, सोलर कुकर तथा दैनिक जीवन में उपयोग में आनेवाले सौर उर्जा पर आधारित अन्य उपकरण
3. संगोष्ठी के उद्देश्यों का निर्धारण- उदाहरणस्वरूप- सौर ऊर्जा के विभिन्न उपकरणों की कार्यप्रणाली को समझना।

1. सौर उर्जा का दैनिक जीवन में महत्त्व संबंधी आलोचनात्मक समझ पैदा करना।

4. प्रक्रिया की रुपरेखा तैयार करना- गतिविधियों का निर्धारण (पत्र-प्रस्तुतीकरण, पोस्टर प्रस्तुतीकरण तथा विचार-विमर्श)

गतिविधियों की समय-अनुसूची का निर्धारण (पत्र-प्रस्तुति प्रथम दिवस दो सत्रों में तथा पोस्टर प्रस्तुतीकरण द्वितीय दिवस दो सत्रों में; प्रत्येक सत्र की अवधि-दो घंटे)

गतिविधियों के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक सामग्री का निर्धारण तथा उसकी व्यवस्था

प्रतिभागियों का विभिन्न गतिविधियों के लिए चयन (विद्यार्थियों में-से)

विद्यार्थियों में से वरिष्ठ विद्यार्थी तथा विज्ञान शिक्षकों का विशेषज्ञ के रूप में चयन, अतिथि विषय विशेषज्ञ भी आमंत्रित किये जा सकते हैं।

दर्शकों तथा श्रोताओं का चयन (अर्थात किन्हें आमंत्रित किया जाना है)

विज्ञान शिक्षक तथा आमंत्रित विषय विशेषज्ञ विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता कर सकते हैं।

5. प्रक्रिया- प्रतिभागियों को विभिन्न उप-प्रकरणों के आधार पर समूहों में बांटा जाता है तथा विभिन्न समूह अलग-अलग सत्रों में पत्र या पोस्टर की प्रस्तुति करते हैं।

पत्र-प्रस्तुति के लिए विद्यार्थी कई स्त्रोतों से सूचनाएँ तथा तथ्य एकत्र करते हैं। पोस्टर-प्रस्तुति के लिए वे पेंटिंग, फोटोग्राफ्स आदि को उपयोग में लाते हैं।

विद्यार्थी विशेषज्ञ, विज्ञान शिक्षक एवं अतिथि विशेषज्ञ प्रत्येक प्रस्तुति पर अपनी टिपण्णी प्रस्तुत करते हैं। प्रतिभागी सत्र के दौरान या सत्र के उपरान्त आयोजित विचार-विमर्श में अपनी जिज्ञासा, प्रश्न तथा सुझावों को पत्र-प्रस्तुतकर्ता, पोस्टर प्रस्तुतकर्ता एवं विषय-विशेषज्ञों के समक्ष रखते हैं। विद्यार्थी विशेषज्ञ, विज्ञान शिक्षक एवं आमंत्रित विषय-विशेषज्ञ इन प्रश्नों का उत्तर देते हैं तथा अंततः अध्यक्षीय निष्कर्ष विज्ञान शिक्षक या आमंत्रित विषय-विशेषज्ञ द्वारा दिया जाता है।

स्व-मूल्यांकन

1. विज्ञान संगोष्ठी किस प्रकार विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान का विस्तार करती है?

2.3.2 विज्ञान कार्यशाला

"कार्यशाला एक ऐसी बैठक है जिसमें लोगों का एक समूह किसी विशेष विषय या परियोजना पर गहन विचार-विमर्श तथा गतिविधि में संलग्न होता है।" (oxforddictionaries.com)

"कार्यशाला एक ऐसी संगोष्ठी या चर्चा समूह है जो विचारों के आदान-प्रदान, तकनीक एवं कौशलों के प्रदर्शन तथा अनुप्रयोग पर बल देता है।" (dictionary.com)

"कार्यशाला एक ऐसी शैक्षणिक संगोष्ठी या व्याख्यान की श्रृखला है जहाँ कम संख्या में विद्यमान प्रतिभागियों के बीच अन्तःक्रिया तथा सूचना का आदान-प्रदान होता है। "(freedictionary.com)

उपरोक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि कार्यशाला एक ऐसी बैठक है जहाँ प्रतिभागियों की संख्या कम होती है तथा किसी विषय या प्रकरण संबंधी ज्ञान तथा कौशलों पर विशेषज्ञों द्वारा विस्तृत प्रस्तुति की जाती है एवं प्रतिभागी प्रकरण संबंधी ज्ञान तथा कौशल के विकास के लिए विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में सहभागिता करते हैं। जैसे- समूह चर्चा, मॉडल निर्माण, चित्रों या छायाचित्रों का संग्रह, भूमिका चित्रण, पैनल विचार-विमर्श आदि।

उद्देश्य

1. विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान के लिए परिप्रेक्ष्य का निर्माण करना जिससे विद्यार्थी विषयगत ज्ञान को विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नए-नए विकास तथा वास्तविक जीवन के अनुभवों से जोड़ सके।
2. विषयगत ज्ञान के नये आयामों से परिचित कराना ताकि विद्यार्थी अपने विषय ज्ञान का विस्तार कर सके।
3. विद्यार्थी में विषय ज्ञान के अनुप्रयोगों की अंतर्दृष्टि विकसित करना।
4. विद्यार्थी में विज्ञान के महत्त्व तथा विज्ञान द्वारा विभिन्न मूल्यों के विकास की गहरी समझ विकसित करना।

कार्यशाला की संरचना

प्रतिभागियों की संख्या- संगोष्ठी की तुलना में कार्यशाला में प्रतिभागियों की संख्या कम होती है। किसी कार्यशाला में प्रतिभागियों की संख्या 25-30 से अधिक नहीं होनी चाहिए।

प्रतिभागियों के प्रकार- किसी कक्षा के विद्यार्थियों का एक समूह तथा संबंधित विज्ञान शिक्षक विशेषज्ञ के रूप में कार्य करते हैं वहीँ उसी कक्षा के अन्य विद्यार्थी प्रतिभागी के रूप में हिस्सा लेते हैं। निम्न कक्षा के विद्यार्थी भी

प्रतिभागी के रूप में हिस्सा ले सकते हैं। विषय विशेषज्ञ के रूप में किसी अतिथि को भी आमंत्रित किया जा सकता है।

संगठन तथा आयोजन

1. विशेषज्ञ विद्यार्थियों द्वारा विज्ञान शिक्षक के मार्गदर्शन में कार्यशाला के प्रकरण तथा उद्देश्यों का निर्धारण
2. कार्यशाला के लिए आवश्यक सामग्री की व्यवस्था।
3. शिक्षक तथा विशेषज्ञ विद्यार्थियों द्वारा कार्यशाला के प्रकरण संबंधी ज्ञान तथा कौशल का प्रस्तुतीकरण
4. प्रतिभागियों द्वारा कार्यशाला प्रकरण पर समूह विचार-विमर्श, मॉडल का निर्माण, वाद-विवाद, सृजनात्मक लेखन, छायाचित्रों का संग्रह तथा प्रस्तुति आदि।
5. शिक्षक तथा विशेषज्ञ विद्यार्थियों का कार्यशाला के प्रकरण पर पैनल विचार-विमर्श- प्रत्येक विशेषज्ञ कार्यशाला के प्रकरण पर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं तथा प्रतिभागी इस दौरान प्रकरण संबंधी प्रश्न विषय विशेषज्ञों से पूछ सकते हैं।
6. प्रतिभागियों की कार्यशाला संबंधी प्रतिपुष्टि
7. विज्ञान शिक्षक, विशेषज्ञ विद्यार्थियों वाम आमंत्रित अतिथि विशेषज्ञ की टिपण्णी

स्व-मूल्यांकन

माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम के किसी प्रकरण पर विज्ञान कार्यशाला के प्रारूप का निर्माण करें।

2.3.3. विज्ञान क्लब

विज्ञान क्लब किसी विद्यालय में विद्यार्थियों तथा विज्ञान शिक्षकों का एक ऐसा संगठन है जहाँ विद्यार्थियों को अपनी रूचि तथा अभिक्षमता के अनुसार विज्ञान संबंधी क्रियाओं के संगठन तथा आयोजन का अवसर प्राप्त होता है, जिससे विद्यार्थियों में विज्ञान संबंधी क्रियाओं के प्रति रूचि उत्पन्न होती है तथा उन्हें पाठ्यक्रम का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है। विज्ञान क्लब विद्यार्थियों को उनके सृजनात्मक क्षमता के विकास का समुचित अवसर प्रदान कर उनके वैज्ञानिक अभिवृत्ति का संवर्धन करता है। विज्ञान क्लब द्वारा ऐसी गतिविधियों का आयोजन किया जाता है जिससे विद्यार्थी विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान को वास्तविक जगत के अनुभवों, सामजिक अभ्यासों, विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे शोध कार्यों तथा नए-नए विकास से जोड़ता है तथा विषयगत ज्ञान के लिए परिप्रेक्ष्य का निर्माण करता है। परिप्रेक्ष्य के निर्माण द्वारा विद्यार्थी में विषय-वस्तु के व्यावहारिक पक्षों की समझ विकसित होती है तथा वह इसके नए आयामों से भी परिचित होता है, परिणामस्वरूप उसके विषय ज्ञान की समृद्धि होती है। विषय ज्ञान के विस्तार के साथ-साथ विज्ञान क्लब द्वारा विद्यार्थियों को रचनात्मक अभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है जिससे विद्यार्थियों की मूल प्रवृति तथा इच्छाओं की संतुष्टि के साथ-साथ संतुलित व्यक्तित्व का विकास भी संभव है। विज्ञान क्लब एक ऐसा संगठन है जिसमें विद्यार्थी सामाजिक अधिगम के वातावरण में अपनी अभिरुचि तथा अभिक्षमता के आधार पर विज्ञान संबंधी क्रियाएँ करने के लिए स्वतंत्र होता है जिससे विज्ञान का अध्ययन उसके लिए रुचिकर बन जाता है। विज्ञान क्लब के क्रियाओं द्वारा विद्यार्थी विज्ञान के तथ्यों, संप्रत्ययों सिद्धांतों के ज्ञान का उपयोग अपने व्यक्तिगत, सामाजिक तथा पर्यावरण संबंधी समस्याओं के समाधान हेतु करता है। विज्ञान क्लब के क्रियाकलापों द्वारा विद्यार्थी विज्ञान के किसी क्षेत्र में विशेष ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास करने के लिए तथा विषय ज्ञान की समृद्धि हेतु कई विज्ञान कार्यक्रमों का आयोजन विज्ञान क्लब द्वारा अमेरिका, इंग्लैण्ड आदि देशों में होते रहते हैं। हमारे देश में एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा विज्ञान क्लब की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है। इसके बाद भी विज्ञान क्लब की स्थापना के क्षेत्र में संतोषजनक कार्य नहीं हुआ है। इसका क्षेत्र मॉडल, चार्ट तथा विज्ञान संबंधी शिक्षण-अध्ययन सामग्री निर्माण तक ही सीमित रहा है। विज्ञान क्लब को सफल तथा प्रभावशाली बनाने के लिए एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा कार्यशाला का आयोजन किया जाता है जिसमें शिक्षकों को विज्ञान क्लब के विभिन्न क्रियाकलापों के आयोजन का प्रशिक्षण दिया जाता है तथा विज्ञान पाठ्यक्रम के विषयगत ज्ञान की समृद्धि में इन क्रियाकलापों के निहितार्थ पर विचार-विमर्श किया जाता है। किन्तु संसाधनों, अभिवृतियों तथा अभिप्रेरणा की कमी के कारण विद्यालयों में विज्ञान क्लब के संगठन एवं आयोजन में विशेष सफलता नहीं मिल पाई है।

विज्ञान क्लब के उद्देश्य

1. विज्ञान पाठ्यक्रम को समुदाय से जोड़ने वाली कड़ी के रूप में कार्य करना।
2. अनौपचारिक वातावरण में वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान हेतु विभिन्न क्रियाकलापों का आयोजन करना।
3. विद्यार्थियों की विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में रूचि उत्पन्न करना तथा उनकी सृजनात्मक क्षमता का विकास करना।
4. विद्यार्थियों को विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नए-नए आविष्कारों तथा ज्ञान के विकास से अवगत करना।
5. विद्यार्थियों की विज्ञान के किसी क्षेत्र में ज्ञान के विस्तार की अभिवृत्ति का विकास करना।
6. विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा वैज्ञानिक कौशलों का विकास करना।
7. विज्ञान के शोध गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न क्रियाकलापों का आयोजन करना।
8. विज्ञान की पत्रिकाओं, जर्नल एवं सारांशों का चिन्तनशील पाठन एवं लेखन।
9. विषयगत ज्ञान के परिप्रेक्ष्य निर्माण के लिए सहायक सामग्री का विकास करना।
10. विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा समाज के अन्तःसंबंधों के परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक प्रक्रिया एवं उत्पादों की प्रकृति तथा विशेषताओं की विवेचना करना।
11. विज्ञान का अन्य विषयों के साथ संबंध स्थापित करना तथा विज्ञान के शिक्षण-अधिगम के लिए अंतरानुशासनिक उपागम को व्यवहार में लाना।
12. विज्ञान के क्षेत्र में उत्पन्न हो रहे नए-नए दृष्टिकोणों के संदर्भ में विज्ञान कार्यक्रमों का आयोजन करना।

विज्ञान क्लब की क्रियाएँ

1. वैज्ञानिक समस्याओं पर व्याख्यान या सेमिनार का आयोजन।
2. समाजोवैज्ञानिक मुद्दों तथा विज्ञान शिक्षण के अंतरानुशासनिक उपागम की युक्तियों पर कार्यशाला का आयोजन।
3. विज्ञान के क्षेत्र में नए-नए आविष्कारों, अभ्यासों एवं वैज्ञानिक रुचियों पर विज्ञान प्रदर्शनी तथा विज्ञान मेला का आयोजन।
4. अनुसन्धान संस्थानों तथा प्रयोगशालाओं का क्षेत्र भ्रमण।

5. दैनिक जीवन के लिए उपयोग में आने वाली सामाग्री का निर्माण जिसमें जीव विज्ञान के संप्रत्यय सम्मिलित रहते हैं।
6. विज्ञान शिक्षण की सहायक सामग्री का निर्माण- चित्र, चार्ट, मॉडल तथा विज्ञान संग्रहालय का निर्माण।
7. स्व-निर्मित वैज्ञानिक उपकरणों का निर्माण।
8. वैज्ञानिकों के जन्मदिन एवं विज्ञान संबंधी विशेष दिनों का समारोह।
9. वैज्ञानिक मुद्दों पर नुक्कड़ नाटक।
10. सामुदायिक संसाधनों के सर्वेक्षण से संबंधित क्रियाएँ।
11. समुदाय जागरूकता शिविर/कार्यक्रम का आयोजन।

विज्ञान क्लब का संगठन

विज्ञान क्लब के संगठन में निम्न बातों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है:

1. विज्ञान क्लब के लिए स्थान, सामग्री आदि की व्यवस्था।
2. विज्ञान क्लब का आकार।
3. सदस्यों व कार्यकारिणी का चुनाव- कार्यकारिणी का चुनाव विद्यार्थियों में से ही होता है। कार्यकारिणी में निम्न सदस्य होते हैं।-
1. सभापति, सचिव, सहायक सचिव, कोषाध्यक्ष, पुस्तकालयाध्यक्ष, स्टोरकीपर, प्रचार अधिकारी, कक्षा प्रतिनिधि।
4. क्लब की मीटिंग के लिए दिन व स्थान का चुनाव।
5. विज्ञान क्लब का संविधान- प्रधानाचार्य संरक्षक तथा विज्ञान शिक्षक प्रवर्तक के रूप में कार्य करते हैं। क्लब के सदस्य प्राप्त साधनों तथा स्थितियों के अनुसार क्रियाओं का चुनाव कर सकते हैं। विज्ञान क्लब की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि विद्यालय प्रशासन विज्ञान क्लब के क्रियाकलापों के संचालन के लिए अधिक-से अधिक सुविधाएँ प्रदान करें।

स्व-मूल्यांकन

1. आप विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय-वस्तु के लिए परिप्रेक्ष्य निर्माण हेतु विज्ञान क्लब में किन-किन क्रियाकलापों का आयोजन करेंगे?

2.4 सारांश

माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय ज्ञान की समृद्धि के लिए विषय वस्तु को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का निर्माण करने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में विद्यालयों में विज्ञान पाठ्यक्रम की विषय वस्तु को विद्यार्थियों के वास्तविक जगत के अनुभवों, सामाजिक व्यवहारों व क्रियाकलापों तथा विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे शोध गतिविधियों तथा नए ज्ञान के विकास के साथ जोड़कर विज्ञान संगोष्ठी, विज्ञान कार्यशाला, विज्ञान क्लब, विज्ञान मेला, विज्ञान प्रदर्शनी आदि गतिविधियों का आयोजन किया जाता है जिससे विद्यार्थी विषय ज्ञान के नए आयामों तथा अनुप्रयोगों से परिचित होते हैं तथा इस दिशा में अन्वेषण के लिए अभिप्रेरित भी

होते हैं। इस प्रक्रिया में विषय ज्ञान की समृद्धि के साथ-साथ विद्यार्थियों की रचनात्मक अभिव्यक्ति तथा वैज्ञानिक अभिवृत्ति एवं अभिक्षमता का भी विकास होता है।

2.5 अभ्यास प्रश्न

1. माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य के विकास की आवश्यकता तथा महत्व पर प्रकाश डालें।
2. विज्ञान शिक्षक के रूप में माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय-ज्ञान की समृद्धि के लिए विद्यालय में आयोजित होनेवाले किसी विज्ञान संबंधी गतिविधि के संगठन तथा आयोजन की संरचना तैयार करें।
3. विज्ञान संगोष्ठी, विज्ञान कार्यशाला एवं विज्ञान क्लब के उद्देश्यों की सोदाहरण विवेचना करें।
4. विषय ज्ञान की समृद्धि हेतु विज्ञान क्लब की उपयोगिता का मूल्यांकन करें।

2.6 संदर्भ पुस्तकें

- दास, आर. सी. (1990). साइंस टीचिंग इन स्कूल्स. स्टर्लिंग पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
- पाण्डेय, एस.के. (2007). विज्ञान शिक्षण. आर.लाल.बुक.डिपो, मेरठ.
- एस.पी. कुलश्रेष्ठ (1999). भारतीय स्कूलों में विज्ञान शिक्षण. आर. लाल. बुक, डिपो, मेरठ.
- सी.एस.,राव (1968). साइंस टीचिंग हैंडबुक. अमेरिकन पीस कारपोरेशन, हैदराबाद.
- सूद, जे.के. (1982). ओब्जेक्टिब्स ऑफ़ साइंस टीचिंग इन सेकेंडरी स्कूल्स, के.जी.गुप्ता इट.ऑल. (एडिशन), एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली.
- रावत, डी.एस.(1989). विज्ञान शिक्षण. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा.
- एन, वैद्य (1976). दी इम्पैक्ट ऑफ़ साइंस टीचिंग. ऑक्सफ़ोर्ड एंड आई.बी.एच. पब्लिशिंग कं., नई दिल्ली.
- शर्मा, आर.सी. एवं शुक्ला, सी.एस. (2005). आधुनिक विज्ञान शिक्षण. धनपतराय पब्लिशिंग को.प्रा.लि., दिल्ली.
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रुपरेखा (2005). एन.सी.आर.टी., नई दिल्ली.
- 'विज्ञान शिक्षण' राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार-पत्र (2008). एन.सी.आर.टी., नई दिल्ली.

इकाई-3
भौतिकीय विज्ञान का शिक्षण

संरचना

3.1. प्रस्तावना

3.2. उद्देश्य

3.3. विद्यालय स्तर पर विज्ञान के सीखने-सिखाने के लक्ष्य एवं उद्देश्य

3.3.1. विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य

3.3.2. विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य

3.3.3. विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लिए निर्धारित उदेश्य

3.3.4. उद्देश्यों के वर्गीकरण का आधार

3.3.5. भौतिकीय विज्ञान के निर्धारित उद्देश्यों का विशिष्टीकरण अथवा अधिगम परिणाम

3.4. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान शिक्षण की भूमिका एवं विज्ञान का स्थान

3.4.1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान शिक्षण की भूमिका

3.4.2. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान का स्थान

3.5. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन

3.5.1. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम

3.5.2. पाठ्यपुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन

3.6. नवाचार आधारित पाठ्यक्रम

3.7. विज्ञान के प्रचार में स्वयं सेवी संगठनों की भूमिका

3.8. भौतिकीय विज्ञान के संदर्भ में निर्माणवाद की व्याख्या और निहितार्थ

3.8.1. विज्ञान के निर्माणवाद कक्षा की विशेषता

3.9. सारांश

3.10. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

3.11. संदर्भ ग्रन्थ

3.1. प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम पर आधारित विषयगत ज्ञान को केंद्र में रखकर परिप्रेक्ष्य का विकास किया और भौतिकीय विज्ञान के पाठ्यक्रम के संदर्भ में विज्ञान क्लब, गोष्ठियों एवं कार्यशालाओं के बारे में जाना।

शिक्षा एक सोद्देश्य गतिविधि है। लक्ष्य के बिना कोई शिक्षा सार्थक नहीं हो सकती। संक्षेप में लक्ष्य किसी शिक्षा की प्रक्रिया की प्रकृति का सूचक है। लक्ष्य एवं उद्देश्य शिक्षा के प्रारूप, विषय की प्रकृति और शिक्षा के स्तर के अनुसार भिन्न होते हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में निर्माणवाद (Constructionism) उपागम का अपना महत्व है और उसका एक अलग ही स्थान हैI विज्ञान पाठ्यचर्या 2005 के अनुसार विज्ञान शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक विकास हैI वर्तमान इकाई में आप विद्यालय स्तर पर पाठ्यचर्या में भौतिकीय विज्ञान का स्थान एवं महत्त्व के बारे में जानते हुए उसके लक्ष्य एवं उद्देश्य से परिचित होंगे इसके साथ ही आप नवाचार आधारित पाठ्यक्रमों जैसे होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम एवं स्वयं सेवी संगठनों की भूमिका को समझेंगे तथा निर्माणवाद के द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण कैसा होना चाहिए? यह जान पाएंगे।

3.2. उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप;

- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रुपरेखा (2005) के संदर्भ में विज्ञान शिक्षण की भूमिका एवं भौतिकीय विज्ञान के स्थान को जान पाएंगे।
- विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को जानेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान के प्रचलित पाठ्यक्रम के बारे में जानेंगे।
- पाठ्यपुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।
- नवाचार आधारित पाठ्यक्रम जैसे होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के बारे में जानेंगे।
- विज्ञान के प्रचार प्रसार में स्वयं सेवी संगठन की भूमिका जैसे - जवाहर बाल भवन, किशोर भारती, विक्रम साराभाई सामुदायिक विज्ञान केंद्र, आंध्र प्रदेश विज्ञान केंद्र, आदि के बारे में जानेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में निर्माणवाद की भूमिका एवं उसका अपनी कक्षा में पाठ-योजना के दौरान उपयोग करने में सक्षम हो सकेंगे।

3.3. विद्यालय स्तर पर विज्ञान के सीखने-सिखाने के लक्ष्य एवं उद्देश्य

शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति में अपेक्षित दिशा में परिवर्तन लाया जा सकता हैंI शिक्षा के द्वारा हम विद्यार्थियों में अन्तर्निहित क्षमताओं को बाहर ला सकते हैं और इन क्षमताओं को प्रकाश मे लाने के लिए हम विभिन्न प्रकार के विषयों को पढ़ाते हैं I विज्ञान एक विषय के रूप में विद्यालयीन पाठ्यक्रम में आरंभ से ही होता हैं। भौतिकीय विज्ञान सहित सभी प्रकार के विज्ञान के ज्ञान को आज हमारे स्कूलों के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य विषय बनाकर एक उचित महत्व दिया जा रहा हैI विज्ञान पढ़ाने से पूर्व हम अपने आप से कुछ प्रश्न करते है। जैसे कि हम विद्यार्थियों को विज्ञान क्यों पढ़ाते हैं ? विज्ञान पढ़ाने के लक्ष्य एवं उद्देश्य क्या है ? विज्ञान शिक्षण विद्यार्थियों के व्यवहार में किस प्रकार के परिवर्तन लाते हैं ? इन प्रश्नों के उत्तर देने से पूर्व हम लक्ष्य एवं उद्देश्यों को परिभाषित करते हैं।

प्रायः विद्यार्थियों को विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य में भ्रम हो जाता है। लक्ष्य आदर्श होते हैं, जिनका क्षेत्र असीमित होता है तथा जिनको पूर्ण रूप से प्राप्त करना प्रायः असम्भव होता है। इसकी प्राप्ति के लिए पूरा स्कूल, समाज तथा राष्ट्र उत्तरदायी होते हैं। विज्ञान शिक्षण के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हो सकते हैं:

- विद्यार्थी अपनी दैनिक जीवन सम्बन्धी समस्याओं को हल करने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रयोग कर सकें।
- बालक की तर्क शक्ति का विकास करना।

लक्ष्य मुख्यतः निम्नलिखित कारणों से निर्धारित किए जाते हैं -

- कक्षा में सीखने का उचित वातावरण तैयार करने के लिए।
- कक्षा में अध्यापक के लिए एक निर्देशक के रूप में सहायता करने के लिए।

उद्देश्य विभिन्न विषयों और उप-विषयों के लिए निश्चित किए जाते हैं। इनका प्रयोग केवल शिक्षण कार्य के लिए ही नहीं, वरन् छात्रों की उपलब्धि की जांच करने के लिये भी किया जाता है। इनका क्षेत्र सीमित होता है तथा हम इनको पूर्ण रूप से निश्चित ही प्राप्त कर सकते हैं।

आई.के. डेविस के अनुसार, "सीखने का उद्देश्य अपेक्षित परिवर्तन का वर्णन है।" बी.एस. ब्लूम ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है, "शैक्षिक उद्देश्य वे लक्ष्य मात्र ही नहीं होते, जिनकी सहायता से पाठ्यक्रम को निर्मित किया जाता है या अनुदेशन के लिये निर्देशन दिया जाता है, अपितु यह मूल्यांकन की प्रक्रिया के विशिष्टीकरण में भी सहायक होते हैं।"

3.3.1. विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य

विज्ञान शिक्षण के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। स्वतंत्रता उपरांत भारत सरकार के द्वारा अनेक आयोगों का गठन किया गया जिसमे सभी ने प्राथमिक स्तर से ही विज्ञान शिक्षण पर जोर दिया।

इन सभी के द्वारा विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए गए:

- प्रक्रिया कौशल का विकास जैसे - अवलोकन, वर्गीकरण, मापन, सम्प्रेषण आदि का विकास करना।
- ज्ञान का अर्जन तथा समझ, समस्या समाधान कौशल का विकास, खोज करने की प्रवृत्ति, तर्क द्वारा सोचने की क्षमता और प्रयोग के आधार पर निष्कर्ष निकालने की क्षमता को विकसित करना।
- समान्यीकरण करने की स्थिति तक पहुँचना एवं उसका दैनिक जीवन में उपयोग करने की क्षमता का विकास करना।
- विज्ञान एवं समाज के बीच अंतर्संबंध की समझ का विकास करना।
- सृजनात्मकता का विकास तथा विज्ञान के नए आविष्कार करना।

विद्यार्थियों के प्रति विद्यालय के कुछ विशेष लक्ष्य होते हैं, जिनके लिए उन्हें शाला में भेजा जाता है। विद्यालय में जो कुछ भी किया जाता है, वह स्कूली शिक्षा के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों पर आधारित होता है। विज्ञान को पढ़ने अथवा पढ़ाने से पहले यह भी सोचा जाता है कि इसे क्यों पढाया जाए ? इसको पढ़ने से क्या क्या लाभ हो सकते हैं ? इन्हीं लाभों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न स्तर के बच्चो की आवश्यकताओं, योग्यताओं तथा रुचियों के आधार पर विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं तथा इन्हें

अनुकूल योजना बनाकर प्राप्त करना ही पढ़ने-पढ़ाने का लक्ष्य मान लिया जाता है। इस दृष्टिकोण से स्कूल में विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये जा सकते हैं -

1. व्यावहारिक लक्ष्य - आज का जीवन वैज्ञानिक चमत्कारों से भरा पड़ा है। प्रतिदिन हमारे उपयोग में आने वाली वस्तुएँ विज्ञान की ही देन हैं। अतः भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का लक्ष्य यह नहीं है कि बालक सिद्धान्तों की जाँच केवल प्रयोगशाला में करना सीखें बल्कि यह है कि वह उनका उपयोग दैनिक जीवन में भी कर सके।
2. अनुशासनात्मक लक्ष्य - विज्ञान के अध्ययन से कार्य में नियमितता एवं विचारों में क्रमबद्धता आती है। इसमें तथ्यों के साथ-साथ वैज्ञानिक पद्धति का भी ज्ञान होता है। इस तरह व्यवस्थित और अनुशासित जीवन-यापन का अमूल्य प्रशिक्षण प्राप्त होता है। यह मानसिक अनुशासन ही व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक होता है।
3. सांस्कृतिक एवं नैतिक लक्ष्य - वर्तमान समय में विज्ञान अत्यन्त प्रभावी है। वैज्ञानिक खोजों तथा आविष्कारों ने मनुष्य के माध्यम से क्रमशः विजय प्राप्त कर वर्तमान सभ्यता को विकसित किया है। अतः समाज के नागरिक को मानव उन्नति का ज्ञान तथा वैज्ञानिक नियमों एवं तथ्यों की सामान्य जानकारी आवश्यक है, तभी वह अपना योगदान समाज को दे सकता है। विज्ञान के अध्ययन से निष्पक्ष चिन्तन एवं निरीक्षण करने की योग्यता आती है। इसके फलस्वरूप आत्म-विश्वास और आत्म-निर्भरता का जन्म होता है। एक आदर्श नागरिक में इन गुणों का होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त विज्ञान का अध्ययन उन महान आविष्कारों की जानकारी भी प्रदान करता है, जिनसे मानव-जीवन सुखी और समृद्ध हो सका है। उन वैज्ञानिकों की लगन, निष्ठा और कठोर परिश्रम आदि की जानकारी व्यक्ति में हर्ष, उत्साह, त्याग, निष्ठा एवं परोपकार की भावना जाग्रत करती है और नैतिक विकास होता है।
4. व्यावसायिक लक्ष्य - भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है। यहाँ बेरोजगारी भयावह स्थिति में है। इसलिये सबके लिये खाना जुटा पाना देश के लिये एक महत्वपूर्ण समस्या है। ऐसी परिस्थिति में विज्ञान की शिक्षा और तकनीकी शिक्षा हमारे नवयुवकों को न केवल डॉक्टर, इंजीनियर, इलेक्ट्रीशियन, लाइनमेन और ओवरसियर आदि व्यवसायों के लिये तैयार करेगी, बल्कि उन्हें अपने दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं को समुचित ढंग से हल करने की भी योग्यता प्रदान करेगी।
5. छात्रों को प्रकृति के विषय में जानकारी देने का लक्ष्य - बालक को सर्वप्रथम अपने पर्यावरण से प्रत्यक्ष परिचय कराना आवश्यक है। जीवन में उसे नित्य पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और विभिन्न जीव-जन्तु देखने को मिलते है। इस पर्यावरण में सूर्य, चन्द्रमा एवं तारे भी नियमित दृष्टिगोचर होते हैं। शुद्ध जल, वायु, भोजन, सिंचाई, खेती एवं स्वास्थ्य भी हमारे दैनिक जीवन से सम्बन्धित हैं। इन सबका ज्ञान बालक को वास्तविक अनुभव के आधार पर होना चाहिए। साथ ही समस्त जानकारी का अन्तिम लक्ष्य यह होना चाहिए कि बालक मानव-जीवन और उसकी कार्यप्रणाली से परिचित होकर यह जान सके कि उसे अपने वातावरण के साथ किस प्रकार अनुकूलित और समायोजित रखा जा सकता है।
6. विज्ञान के प्रति रूचि एवं प्रेम जाग्रत करने का लक्ष्य - आज के इस वैज्ञानिक युग में हर कार्य में वैज्ञानिक उपकरणों, यन्त्रों एवं औजारों का उपयोग आवश्यक होता जा रहा है। अतः बालकों में विज्ञान के प्रति सही रूचि पैदा होना आवश्यक है, ताकि उन उपकरणों और साधनों से भली-भाँति परिचित होकर उनका समुचित ढंग से उपयोग करना सीख सकें और अपने दैनिक जीवन में लाभ उठा सकें।

7. प्रकृति के नियमों की वैज्ञानिक जानकारी देकर अन्धविश्वास दूर करने का लक्ष्य - ब्रह्माण्ड में ऐसी घटनाएँ और क्रियाएँ नित्य होती हैं, जिनके पीछे कोई न कोई वैज्ञानिक नियम कार्यरत होते हैं। इस जानकारी के अभाव में बालक उन्हें जादू के समान ही विचित्र घटनाएँ मानकर अन्धविश्वासी बनने के लिए विवश होता है। बीज से विशाल वृक्ष कैसे तैयार होता है?, इन्द्रधनुष क्यों दिखाई देता है?, बादल कहाँ से आते हैं?, आदि ऐसे प्रश्न हैं, जिनका वैज्ञानिक कारण नहीं जानने से अन्धविश्वास का पनपना स्वाभाविक है। इसी भाँति हवा, पानी, भोजन आदि बुनियादी आवश्यकताओं की वस्तुएँ भी वैज्ञानिक नियमों से संचालित होती हैं। अतः छात्रों को विज्ञान के नियमों और सिद्धान्तों की प्रारम्भिक जानकारी देना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे उनमें अन्धविश्वास की भावना दूर हो सके।
8. छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास का लक्ष्य - छात्रों को यह जानना आवश्यक है कि हर कार्य में स्वाभाविक कारण निहित होता हैं। अतः उन्हें वैज्ञानिक ढंग से सोचने की आदत डालनी चाहिए। विशुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के लिये बालकों द्वारा निम्नलिखित बातों को अपने दैनिक जीवन में व्यवहार में लाना आवश्यक है - (क) अन्धविश्वासी नहीं होना चाहिए। (ख) दूसरे के मतों का आदर करना चाहिए। (ग) तथ्यों के आधार पर ही किसी बात को सत्य मानना चाहिए। (घ) नये तथ्यों के आधार पर अपनी मान्यताओं को परिवर्तित करने को तत्पर होना चाहिए। (ड.) कभी भी सीधे निष्कर्ष पर नहीं आना चाहिए। बालक के व्यवहार में इन सभी लक्षणों की उपस्थिति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का द्योतक है।
9. छात्रों में वैज्ञानिक ढंग से सोचने की आदत पैदा करने का लक्ष्य - कोई महत्वपूर्ण निर्णय लेने से पूर्व उस विषय पर गम्भीर सोच-विचार करना, उसकी उचित जाँच पड़ताल कर लेना और उसके बाद ही किसी निर्णय पर पहुँचना उचित है। यह एक वैज्ञानिक पद्धति है, अतः इसकी आदत बालकों में प्रारंभ से ही पड़नी चाहिए।
10. छात्रों में धैर्य, स्वाध्याय एवं स्वावलम्बन की भावना का विकास - विज्ञान के अध्ययन से बालक में आत्म-विश्वास और आत्म-निर्भरता का विकास होता है। वैज्ञानिक अन्वेषकों की जीवनियाँ- असीम धैर्य, निष्ठा, लगन, सतत् अध्ययन, चिन्तन तथा मनन की गाथाएँ हैं। इनके अध्ययन से बालकों में नैतिकता का विकास किया जा सकता है।

3.3.2. विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य

विद्यालय शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर विज्ञान शिक्षण के क्या लक्ष्य होने चाहिए, यह निश्चित करने के लिए देश विदेश में शिक्षाशास्त्रियों द्वारा समय-समय पर प्रयत्न किये जाते रहे हैं जिसके फलस्वरूप विद्यालय शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गए-

प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य -

- छात्रों में निरीक्षण शक्ति को विकसित करना।
- छात्रों में प्रकृति और भौतिक व सामाजिक पर्यावरण के अध्ययन के प्रति रूचि जाग्रत करना और उसे बनाये रखना।
- छात्रों में प्राकृतिक घटनाओं के सूक्ष्म प्रेक्षण, खोज, वर्गीकरण की योग्यता विकसित करना।
- छात्रों की गणनात्मक, रचनात्मक और अन्वेषणात्मक शक्तियों को विकसित करना।
- छात्रों में स्वस्थ जीवन के लिए उपयुक्त आदतों का विकास करना।

- छात्रों में स्वच्छ और क्रमबद्ध रीति से कार्य करने की आदत डालना।
- छात्रों में मानचित्र, चार्टो, रेखाचित्र आदि को पढ़ने की कुशलता उत्पन्न करना।

उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य -

- छात्रों को वैज्ञानिक तथ्यों का ज्ञान प्रदान करना।
- छात्रों में तार्किक रूप से सोचने की योग्यता विकसित करना।
- छात्रों में प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की योग्यता और आदत विकसित करना।
- छात्रों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास करना।
- छात्रों में अपने परिवेश में व्याप्त विज्ञान के प्रभाव को समझने में सहायता करना और उनमे वैज्ञानिक अभिरुचि को विकसित करना।
- छात्रों को आगामी कक्षाओं में विज्ञान के अध्ययन के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि प्रदान करना।

निम्न माध्यमिक स्तर के लिये विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य -

- छात्रों को विषय के गहन एवं सूक्ष्म ज्ञान की जानकारी देना।
- छात्रों में प्रयोग सम्बन्धी कुशलता उत्पन्न कर विज्ञान के उपयोगो को समझने की योग्यता विकसित करना।
- छात्रों के रचनात्मक और अन्वेषणात्मक शक्तियों को पनपने के उचित अवसर प्रदान करना।
- छात्रों में उच्च स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम के लिये आधार तैयार करना जिसमें बच्चों को आवश्यक सूचनायें, तथ्यों और कुछ प्रयोगों का अभ्यास कराया जाए।
- छात्रों में तथ्यों से सामान्यीकरण तक पहुँचने और नित्य प्रति की समस्याओं को सुलझाने की योग्यता विकसित करना।
- छात्रों में विज्ञान के योगदान के प्रति अपूर्व आस्था उत्पन्न करना।

उच्च माध्यमिक स्तर के लिये विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य -

- छात्रों को भौतिकीय विज्ञान के ज्ञान के विशेष पक्षों में प्रवीणता अर्जित करना।
- छात्रों को भौतिकीय विज्ञान की शाखाओं की नवीन अवधारणाओं और विचारो से परिचित करना।
- भौतिकीय विज्ञान की पढ़ाई द्वारा छात्रों को किसी विशेष व्यवसाय अथवा उससे सम्बंधित पाठ्यक्रम के अध्ययन के लिए तैयार करना।
- छात्रों को अपने चुने हुए विज्ञान के विशेष ज्ञान का स्वतंत्र रूप से अध्ययन और मनन करने के लिए प्रेरित करना।
- जन-सामान्य के जीवन पर विज्ञान के प्रभाव को समझाना और वैज्ञानिक अभिरूचियों को विकसित करना।

- संदर्भ ग्रन्थ तथा विशेषज्ञ पत्रिकाओं आदि का अध्ययन कर नवीनतम वैज्ञानिक खोजों को समझने और स्वयं ऐसा कुछ कर सकने की प्रेरणा और अवसर प्रदान करना।

3.3.3. विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लिए निर्धारित उदेश्य

अन्य विषयों की तरह ही भौतिकीय विज्ञान का शिक्षण विद्यालयों में इसी प्रयोजन से संपन्न किया जाता है कि छात्रों के उचित विकास और प्रगति को ध्यान में रखते हुए उनके व्यवहार में उचित परिवर्तन लाए जाएँ I ये परिवर्तन व्यवहार के तीन पक्षों -ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों में लाए जाए I इसलिए जब सामान्य रूप से हमें भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करना होता है तो हमें व्यवहार के तीनों पक्षों से सम्बन्धित उन सभी अपेक्षित परिवर्तनों की व्याख्या करनी होती है जिनके होने की पूरी संभावना विज्ञान के शिक्षण के माध्यम से होती है

शैक्षिक उद्देश्यों को व्यवहारगत परिवर्तनों के संदर्भ में व्याख्या करने हेतु हम इन्हें कुछ निश्चित वर्गों जैसे ज्ञानात्मक, बोधात्मक, प्रयोगात्मक, कौशलात्मक, रूचि, दृष्टिकोण तथा प्रशंसात्मक उद्देश्यों में भी विभाजित करने का प्रयत्न करते हैं इस परिप्रेक्ष्य में विद्यालय स्तर पर भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों को सामान्य रूप से अग्रलिखित प्रकार से निर्धारित किए जाने के प्रयत्न किए जा सकते हैं-

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान से सम्बंधित प्रत्ययों, पदों, सूत्रों, परिभाषाओं, सिद्धान्तों, अवधारणाओं, तथ्यों तथा विधियों के बारे में ज्ञान प्राप्त करते हैं। अतः छात्र के व्यवहार में निम्नलिखित परिवर्तन होंगे -

(1) विज्ञान शब्दावली के अनुसार नये-नये शब्द एवं संकेत की जानकारी। (2) विभिन्न परिभाषाओं, सिद्धान्तों आदि से परिचित होना तथा पारस्परिक सम्बन्ध को समझना। (3) आस-पास के वातावरण से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी। (4) तर्कों, पदों, सिद्धान्तों एवं प्रत्ययों का पूरा स्मरण तथा वर्णन।

2- बोधात्मक उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित प्रत्ययों, पदों, सूत्रों, परिभाषाओं, सिद्धान्तों, अवधारणाओं, तथ्यों तथा विधियों से सम्बंधित ज्ञान के बारे में समुचित समझ विकसित करते हैं। इससे छात्र के व्यवहार में निम्नलिखित परिवर्तन की अपेक्षा होती है -

(1) आवश्यकतानुरूप वस्तुओं, यन्त्रों एवं उपकरणों का चुनाव करना। (2) विभिन्न भौतिकीय राशि तथा लिखित समय इकाईयों का प्रयोग करना। (3) विभिन्न तथ्यों, प्रत्ययों आदि की परस्पर तुलना कर सकना।

3. प्रयोगात्मक उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान से सम्बंधित अपने अर्जित ज्ञान और समझ का प्रयोग दिन प्रतिदिन के कार्यों को सम्पादित करने तथा नई और अपरिचित समस्याओं का सामना करने हेतु करते हैं। इससे छात्र में निम्नलिखित व्यवहारगत परिवर्तन होंगे-

(1) घटना के वर्गीकरण में उपस्थित सिद्धान्तों को छात्र पहचानता है। (2) दिये गये आँकड़ों की सहायता से सामान्यीकरण करता है। (3) घटनाओं के कारण एवं प्रभाव को जानता है।

4. कौशलात्मक उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान के ज्ञान, बोध तथा प्रयोग से सम्बंधित आवश्यक कौशलों जैसे प्रयोग एवं परीक्षण कौशल, उपकरण एवं यंत्रों के उपयोग सम्बन्धी कौशल, गणितीय कौशल, रेखाकृत निर्माण कौशल, सर्वेक्षण कौशल आदि का अर्जन करते हैं। छात्रों में चार्ट, प्रतिरूप एवं चित्र, रेखाचित्र, ग्राफ बनाने की कुशलता का विकास होता हैं। इससे छात्र के व्यवहार में निम्नलिखित परिवर्तन परिलक्षित होंगे -

(1) रेखाचित्र, चित्र, ग्राफ, प्रतिरूप बनाना तथा उनका यथास्थान प्रयोग करना। (2) पर्यावरण से सम्बन्धित वस्तुओं, तथ्यों का कुशलतापूर्वक प्रयोग एवं उपयुक्त क्षमता का विकास करना। (3) संग्रह की आदत का विकास तथा उन्हें व्यवस्थित करना।

5. अभिवृत्ति सम्बन्धी उद्देश्य - किसी भी विषय को सीखने एवं जानने के लिये वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास होना चाहिए। अभिवृत्ति का अर्थ है- किसी व्यक्ति की किसी वस्तु अथवा आदर्श के प्रति इच्छा, विश्वास, अनुकूल इच्छा तथा उसे अपनाने का प्रयास आदि का एकीकरण। अतः बालक में क्रमबद्ध ढंग से सोचने-विचारने, परीक्षण करने तथा सही निर्णय लेने की आदत का निर्माण होता हैं। इससे छात्र के व्यवहार में अग्रलिखित परिवर्तन होंगे-

(1) विज्ञान विषय के प्रति नवीन एवं व्यापक दृष्टिकोण का विकास होगा। (2) तथ्यों पर सूक्ष्म चिन्तन एवं निरीक्षण का विकास होगा। (3) सही निर्णय लेने की आदत तथा मन को एकाग्र करने की आदत पनपेगी।

6. रूचि सम्बन्धी उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान की दुनिया तथा उसके ज्ञान, बोध, प्रयोग तथा कौशल अर्जन के प्रति अपनी रूचि का प्रदर्शन करते हैं। इससे बालक में निम्नलिखित व्यवहारगत परिवर्तन होंगे-

(1) पत्रिकाओं के पढ़ने की आदत का विकास कर सकेंगे। (2) पुस्तकालय में पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त अन्य संदर्भ पुस्तकें पढ़ना। (3) शाला स्तर या प्रादेशिक स्तर की विज्ञान पत्रिका में अपना लेख प्रकाशित करवाना। (4) मॉडल, चार्ट, खिलौने आदि बनाना। (5) वैज्ञानिक गतिविधियों जैसे- विज्ञान मेला, विज्ञान क्लब तथा पर्यटन में भाग लेना।

7. प्रशंसात्मक उद्देश्य - छात्र भौतिकीय विज्ञान की प्रगति से जुड़े हुए वैज्ञानिको के योगदान तथा विज्ञान की सामाजिक उपयोग की सराहना करते हैं।

3.3.4. उद्देश्यों के वर्गीकरण का आधार

शिक्षकों ने सामान्य लक्ष्यों को वांछित उद्देश्यों के रूप में स्वीकार तो किया, किन्तु इनकी अस्पष्टता ने शिक्षण में इनके प्रयोग में अधिक सहायता नहीं दी। इस दोष को दूर करने के लिये मनोवैज्ञानिकों के एक समूह (ब्लूम, कर्थवाल, मसीहा, सिम्पसन) ने सन् 1948 में मानव व्यवहार के समान तत्वों को वर्गीकृत करने के प्रयास किए। इस समूह ने एक नवीन वर्गीकरण का निर्माण किया, जिसका आधार स्थूल से सूक्ष्म की ओर' तथा सरल से कठिन की ओर' था। बी.एस. ब्लूम ने अपने सहयोगियों के साथ शिकागो विश्वविद्यालय में निम्न तीनों वर्गों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया।

(1) ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)

(2) भावात्मक पक्ष (Affective Domain)

(3) क्रियात्मक पक्ष (Conative Or Psychomotor Domain)

इसमें ज्ञानात्मक पक्ष का ब्लूम ने 1956 में, भावात्मक पक्ष का ब्लूम कर्थवाल तथा मसीहा ने 1964 में, तथा क्रियात्मक पक्ष का सिम्पसन ने 1963 में वर्गीकरण प्रस्तुत किया।

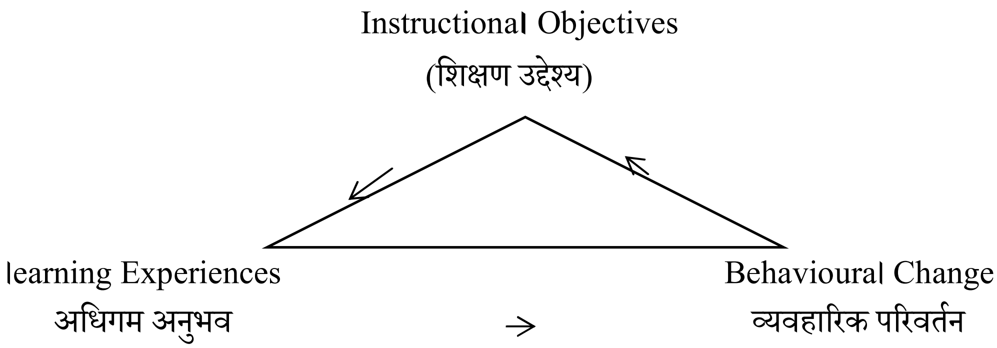

इस वर्गीकरण को निम्नलिखित तालिका द्वारा दर्शाया जा सकता है -

तालिका **(Table)**

ज्ञानात्मक पक्ष **(Cognitive Aspect)**	भावात्मक पक्ष **(Affective Aspect)**	क्रियात्मक पक्ष **(Conative Aspect)**
ज्ञान	ग्रहण करना	उत्तेजना
बोध	प्रतिक्रिया	कार्यवाही
प्रयोग	अनुमूल्यन	नियंत्रण
विश्लेषण	विचारना	समायोजन
संश्लेषण	व्यवस्थापन	स्वभावीकरण
मूल्यांकन	चरित्रीकरण	आदत या कौशल

ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)

इस पक्ष के अन्तर्गत वे उद्देश्य आते हैं, जिनका सम्बन्ध हमारे ज्ञान के पुनः स्मरण, पहचान तथा बौद्धिक क्षमताओं एवं कौशलों के विकास से होता है।

प्रोफेसर ब्लूम ने इस पक्ष का विवरण इस प्रकार दिया है -

(Writing Objectives by Mager, 1962)

1. **ज्ञान (Knowledge)**

परिभाषित करना, सारणी बनाना, छाँटना, मापना, प्रत्यास्मरण, पहचानना

2. **बोध (Comprehension)**

व्याख्या, निर्णय, वर्गीकरण, सूत्रीकरण, संकेत, चयन

3. **अनुप्रयोग (Application)**

घोषणा, गणना, प्रयोग, जाँचना, प्रदर्शन, अनुमान

4. **विश्लेषण (Analysis)**

विभाजन, आलोचना, सारांश, विरोध, तुलना, अलग करना

5. **संश्लेषण (Synthesis)**

तर्क करना, सम्बन्ध, भविष्यवाणी करना, सामान्यीकरण, विवाद करना, निष्कर्ष निकालना

6. **मूल्यांकन (Evaluation)**

निर्णय, प्रतिवाद करना, आकलन करना, मूल्यांकन, पहचान, निर्धारण

भावात्मक पक्ष (Affective Domain)

बालक के व्यवहार का भावात्मक पक्ष उसकी रूचियों (Interests), संवेगों (Emotions) तथा मनोवृत्तियों (Attiudes) से सम्बन्धित होता है।

भावात्मक पक्ष का विवरण इस प्रकार है:

(Writing Objectives by Mager, 1962)

(1) आग्रहण (Receiving) :

सुनना, स्वीकारना, छाँटना, ग्रहण करना, प्रत्यक्षीकरण, चाहना

(2) अनुक्रिया (Responding):

उत्तर देना, विकसित करना, सारणीयन, छाँटना, लिखना, कथन

(3) अनुमूल्यन (Valuing) :

स्वीकारना, पहचानना, भाग लेना, प्रभावित करना, इंगित करना, निर्णय लेना

(4) अवधारणा (Conceptualization) :

विभेदीकरण, सम्बन्ध स्थापित करना, विश्लेषण, प्रदर्शित करना, इंगित करना, तुलना

(5) व्यवस्थापन (Organization) :

सह-सम्बन्ध स्थापित करना, निर्णय करना, छाँटना, संगठित करना, ज्ञात करना, बनाना

(6) चरित्रीकरण (Characterization) :

पुनरावृत्ति विकसित करना, परिवर्तन, प्रदर्शित, स्वीकारना, पहचानना

क्रियात्मक पक्ष (Conative or Psychomotor Domain)

हमारे व्यवहार का क्रियात्मक पक्ष गतिवाही कौशल (Motor Skill) तथा ऐसी क्रियाओं में प्रकट होता है, जिनके लिये हमारी मांसपेशीय (Muscular) एवं आंगिक गतियों की आवश्यकता होती है। क्रियात्मक पक्ष के स्तर निम्नलिखित हैं -

- उत्तेजना - इसमें कार्य के प्रति उत्तेजना लाई जाती है।
- कार्यवाही - इसमें बालक उत्तेजना के आधार पर गत्यात्मक क्रिया सम्पादित करता है।
- नियन्त्रण - इसके द्वारा बालक अपनी क्रिया को साधता है।
- समायोजन - इसमें कई क्रियाओं पर नियन्त्रण के आधार पर उनके मध्य समायोजन लाया जाता है।
- स्वभावीकरण - इसके अन्तर्गत कार्य करने की एक शैली बन जाती है तथा कार्य एक विशेष गति एवं ढंग से सम्पादित होता है।
- आदत अथवा कौशल - इसके अन्तर्गत कार्य करते रहने की शैली एक आदत बन जाती है।

सिम्पसन ने क्रियात्मक पक्ष के निम्नलिखित स्तर बताये हैं:

प्रयत्क्षीकरण, व्यवस्था, निर्देशात्मक अनुक्रिया, कार्यप्रणाली, जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया

क्रियात्मक पक्ष का विवरण इस प्रकार है:-

(1) प्रत्यक्षीकरण- निर्मित करना, रेखाचित्र खींचना।

(2) व्यवस्था- प्रारूप बनाना।

(3) निर्देशित अनुक्रिया- पहचानना, स्थापित करना।

(4) कार्यप्रणाली- मरम्मत करना, अभ्यास करना।

(5) जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया- जोड़ना, सृजन करना।

उद्देश्यों को व्यावहारिक पदों के रूप में लिखना:

विशिष्ट उद्देश्यों को व्यावहारिक पदों के रूप में लिखने की कई विधियाँ या उपागम प्रयोग में लाये जाते हैं। इनमें से प्रमुख इस प्रकार है:-

(1) रॉबर्ट मेगर उपागम (Robert Mager's Approach)

(2) रॉबर्ट मिलर उपागम (Robert Miller's Approach)

(3) आर.सी.ई.एम. उपागम (RC.E.M. Approach)

(1) रॉबर्ट मेगर उपागम (Robert Mager's Approach) - इस उपागम में उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिये ब्लूम के वर्गीकरण को आधार बनाया गया है। उद्देश्यों को लिखने के लिये मेगर ने कार्यपरक क्रियाओं (Action Verbs) का उपयोग किया है। इन क्रियाओं के माध्यम से विद्यार्थियों के अपेक्षित व्यवहार अथवा अधिगम परिणामों को व्यावहारिक रूप में लिखा जा सकता है। मेगर ने मुख्य रूप से व्यवहार के ज्ञानात्मक एवं भावात्मक (Cognitive and Affective) पक्षों का ही विवरण प्रस्तुत किया है।

(2) मिलर उपागम **(Millers Approach)** - मेगर (Mager) ने अपने उपागम में व्यवहार के क्रियात्मक पक्ष को उपेक्षित रखा है। रॉबर्ट मिलर (Miller, 1962) ने इस पक्ष के व्यावहारिक उद्देश्यों को व्यवहार परक शैली में लिखने के लिये मेगर की तरह 'कार्यपरक क्रियाओं' की सूची प्रस्तुत की है।

(3) आर.सी.ई.एम. उपागम (R.C.E.M. Approach) - मेगर व मिलर की विधियाँ व्यवहार के तीनों पक्षों से सम्बन्धित उद्देश्यों को व्यावहारिक पदों के रूप में लिखने में असमर्थ रही हैं। यदि मेगर उपागम ज्ञानात्मक व भावात्मक पक्ष से सम्बन्धित है तो मिलर क्रियात्मक पक्ष से। इस प्रकार इन दोनों उपागमों में से एक भी व्यवहार के सभी पक्षों से सम्बन्ध नहीं रखता। दूसरी मुख्य बात यह है कि इन दोनों उपागमों में प्रयुक्त कार्यपरक क्रियाओं (Action Verbs) की पुनरावृत्ति दूसरे वर्ग में ही नहीं बल्कि एक ही वर्ग में हुई है। इस कमी के कारण इन दोनों उपागमों की कड़ी आलाचेना हुई है। इन कमियों को दूर करने के लिये ही एक नई विधि का विकास हुआ है जिसे आर.सी.ई.एम. उपागम नाम दिया गया है, क्योंकि इसका विकास क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय मैसूर द्वारा किया गया है।

इस उपागम में कार्यपरक क्रियाओं के स्थान पर मानसिक प्रक्रियाओं या मानसिक योग्यताओं का प्रयोग किया गया है। इसमें ब्लूम द्वारा दिये गये ज्ञानात्मक पक्ष के छः वर्गों के स्थान पर चार वर्ग किये गये हैं। अन्तिम तीन वर्गों यथा- विश्लेषण, संश्लेषण व मूल्यांकन को सम्बन्धित करके सृजनात्मक (Creativity) नाम दिया गया है। दूसरा अन्तर यह है कि ब्लूम द्वारा दिये गये बोध वर्ग को समझ (Understanding) नाम दिया गया है।

3.3.5. भौतिकीय विज्ञान के निर्धारित उद्देश्यों का विशिष्टीकरण अथवा अधिगम परिणाम

ज्ञानात्मक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण

- छात्र भौतिकीय विज्ञान से सम्बंधित पदों, तथ्यों, अवधारणाओं, सिद्धांतों एवं प्रक्रियाओं का प्रत्यास्मरण कर सकते हैंI जैसे - उत्प्रेरण की परिभाषा देंगे।
- छात्र भौतिकीय विज्ञान से सम्बंधित पदों, तथ्यों, अवधारणाओं, सिद्धांतों एवं प्रक्रियाओं की पहचान कर सकते हैंI जैसे -हाइड्रोकार्बन के उदाहरण बताएंगे।
- **बोधात्मक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण**
- छात्र उदाहरण के माध्यम से किसी पद, अवधारणा या सिद्धांत को स्पष्ट करते है, उसकी व्याख्या कर सकते हैंI जैसे- रासायनिक अभिक्रिया की व्याख्या करेंगे।
- छात्र दिये हुए कथनों, अवधारणाओं, संरचनाओं तथा व्यवस्थाओं में निहित त्रुटियों को बता सकते हैंI जैसे - रासायनिक अभिक्रिया में त्रुटि बता पायेंगे।
- छात्र दिये हुए पदार्थो, अवधारणाओं आदि का वर्गीकरण कर सकते हैंI जैसे - तत्व, यौगिक, मिश्रण का वर्गीकरण करेंगे।

प्रयोगात्मक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण

- छात्र कार्य एवं कारण में सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। जैसे - प्रदूषण एवं जलवायु के बीच सम्बन्ध स्थापित करेंगे।
- छात्र प्राप्त वैज्ञानिक जानकारी का उपयोग दैनिक जीवन सम्बन्धी कार्यो को सम्पादित करने, अपने परिवेश को समझने या समस्याओं के समाधान हेतु कर सकते हैंI जैसे - धूप में काले कपड़े नहीं पहनने चाहिए।
- **कौशलात्मक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण**
- छात्र उपकरणों एवं प्रयोग सामग्री का ठीक तरह से उपयोग कर सकते हैंI जैसे - टाइटरेसन का सटीक अंकन करेंगे, तापमान का सही मापन करेंगे।
- छात्र वस्तुओं और घटनाओं को भौतिकीय परिणामों, नाप-तोल तथा मापन इकाईयों में व्यक्त कर सकते हैं।

रूचि सम्बन्धी उद्देश्यों का विशिष्टीकरण

- छात्र जीव विज्ञान से सम्बंधित विषयों की चर्चा में भाग लेने सम्बन्धी अपनी रूचि का प्रदर्शन करते हैं और चर्चा में सक्रिय रहकर वाद-विवाद में भाग लेते हैं। जैसे - भौतिकीय परिवर्तन के बारे में रूचि पूर्वक चर्चा करेंगे।

प्रशंसात्मक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण

- छात्र वैज्ञानिक प्रगति से परचित होने में अपनी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति करते हैं। जैसे - ब्लैक होल शोध पर प्रसन्नता की अभिव्यक्ति।

- छात्र महान वैज्ञानिकों के प्रति अपने आदर और प्रशंसात्मक भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। जैसे - विज्ञान दिवस का आयोजन, वैज्ञानिको की जयंती मनाना।

अभिवृत्ति सम्बन्धी उद्देश्यों का विशिष्टीकरण

- छात्र बिना किसी उचित प्रमाण तथा साक्ष्य के आधार पर किसी भी तथ्यों को न तो स्वीकार करते हैं और न अस्वीकार।जैसे - अन्धविश्वास से दूर रहना।
- छात्र समूह भावना, आत्मनिर्भरता तथा उदार मनोवृत्ति का परिचय देते हैं।जैसे- प्रयोग, प्रोजेक्ट आदि।
- छात्र इस बात पर दृढ़ रहते है कि जो कुछ भी घटित होता है उसके मूल में कुछ कारण होता है। जैसे - ग्रीन हाउस इफ़ेक्ट, सुनामी आदि।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. लक्ष्य एवं उद्देश्य में अन्तर स्पष्ट करें।

____

____

2. विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य क्या हैं ?

____

____

3. ब्लूम के द्वारा दिये गए उद्देश्यों के वर्गीकरण को स्पष्ट करें ?

____

____

3.4. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान शिक्षण की भूमिका एवं विज्ञान का स्थान

3.4.1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान शिक्षण की भूमिका

प्रकृति के अद्भुत एवं विस्मयकारी पहलुओं के प्रति मनुष्य की आरम्भिक समय से प्रतिक्रिया रही है - प्रकृति के भौतिक, जैविक एवं भौगोलिक वातावरण का ध्यानपूर्वक अवलोकन, सार्थक प्रतिमानों और सम्बन्धो की खोज, प्रकृति के साथ अंतःक्रिया के लिए नए उपकरणों का निर्माण एवं उपयोग तथा विश्व को समझने के लिए अवधारणात्मक मॉडल की रचना। इसी मानवीय उद्यम से आधुनिक विज्ञान का विकास हुआ। मोटे तौर पर कहें, तो वैज्ञानिक पद्धति में कई अंतःसंबद्ध चरण शामिल होते है। अवलोकन, बारंबारता और प्रतिमानों की तलाश, परिकल्पना करना, गुणात्मक व गणितीय मॉडल बनाना, अवलोकनों तथा नियंत्रित प्रयोगों द्वारा सिद्धांतों को वैध या गलत साबित करना और प्रयोगों के परिणामों का निगमन करना तथा इनके माध्यम से ऐसे सिद्धांतों, नियमों तक पहुँचना जिनसे प्राकृतिक जगत संचालित होता है। विज्ञान गत्यात्मक और निरंतर परिवर्तित ज्ञान का भंडार है

जिसमें अनुभव के नए-नए क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। एक प्रगतिशील समाज में विज्ञान सचमुच मुक्तिदायी भूमिका निभा सकता है। इसके सहयोग से लोगों को गरीबी, अज्ञानता और अंधविश्वास के दुष्चक्र से निकाला जा सकता है। आज का मनुष्य तेज़ी से परिवर्तनशील समाज का हिस्सा है जिसमें लचीलापन, नवाचार और रचनात्मकता प्रमुख कौशल समझे जाते हैं। विज्ञान शिक्षा का स्वरूप तय करते हुए इन विविध पहलुओं को ध्यान में रखने की ज़रूरत है। अच्छी विज्ञान शिक्षा बालक को जीवन व विज्ञान के प्रति ईमानदार बनाती है। इस तरह का दृष्टिकोण विज्ञान पाठ्यचर्या के कुछ मूलभूत मानदंडों की ओर अग्रसर करता है जो कि नीचे दिए गए हैं -

1. संज्ञानात्मक वैधता के लिए आवश्यक है कि पाठ्यचर्या की विषयवस्तु, प्रक्रिया, भाषा व शिक्षा-शास्त्रीय अभ्यास आयु के अनुरूप हों और बच्चे की संज्ञानात्मक पहुँच के भीतर आएँ।
2. संज्ञानात्मक वैधता के लिए आवश्यक है कि पाठ्यचर्या बच्चों तक महत्वपूर्ण व वैज्ञानिक विषयवस्तु पहुँचाए। बच्चों के संज्ञानात्मक स्तर तक पहुँचने के लिए अन्तर्वस्तु को सरल तो किया जाए लेकिन उसे इतना हल्का नहीं बनाया जाए कि मूल जानकारी या तो गलत हो या निरर्थक हो जाए।
3. प्रक्रिया की वैधता के अन्तर्गत आवश्यकता है कि पाठ्यचर्या विद्यार्थी को उन प्रणालियों व प्रक्रियाओं को अर्जित करने में व्यस्त रखे जो उसे वैज्ञानिक जानकारी के पुष्टिकरण व सृजन करने की ओर ले जा सकें कि समय के साथ-साथ विज्ञान की अवधारणाएँ कैसे विकसित हुई। इससे विद्यार्थी को यह समझने में भी मदद मिलेगी कि विज्ञान एक सामाजिक उद्यम है और सामाजिक घटक किस प्रकार विज्ञान के विकास को प्रभावित करते हैं।
4. पर्यावरण सम्बन्धी वैधता के लिए आवश्यक है कि विज्ञान को विद्यार्थियों के स्थानीय व वैष्विक दोनों के वृहद पर्यावरण के संदर्भ में रखा जाए ताकि वह विज्ञान, तकनीक व समाज के पारस्परिक संवाद के क्रम में मुद्दों को समझ सके और उन्हें कार्यक्षेत्र में प्रवेश करने के लिए आवश्यक ज्ञान व कौशल दे सके।
5. नैतिक वैधता के लिए ज़रूरी है कि पाठ्यचर्या ईमानदारी, वस्तुपरकता, सहयोग, 'भय व पूर्वाग्रह से मुक्त' जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित करे और विद्यार्थी में पर्यावरण व जीवन के संरक्षण के प्रति चेतना को विकसित कर सके।

3.4.2. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान का स्थान

भौतिकीय विज्ञान सहित सभी प्रकार के विज्ञान के ज्ञान को आज हमारे स्कूलों के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य विषय बनाकर उचित महत्त्व दिया जा रहा है। कोठारी आयोग ने अपने सुझाव देते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा है कि हमारी दृष्टि से विज्ञान को विद्यालय पाठ्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग बनाने पर बहुत जोर दिया जाना चाहिए। इसलिए विद्यालयों में प्रथम दस वर्ष की सामान्य शिक्षा के अंतर्गत विज्ञान और गणित दोनों की शिक्षा सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के अनुसार विद्यालयों में विज्ञान का निम्नलिखित स्थान है-

प्राथमिक स्तर - इस स्तर पर बच्चे को अपने परिवेश में घुलने-मिलने और साथ ही खुशी-खुशी इसकी छानबीन हेतु तैयार करना चाहिए। इस स्तर पर मुख्य उद्देश्य हैं; बच्चे में अपने आसपास की दुनिया, प्राकृतिक वातावरण, शिल्प, तथ्यों एवं लोगों के प्रति उत्सुकता को परिपोषित करना, उसे खोजी कार्यों की ओर अग्रसर करने के साथ-साथ ऐसे कार्यकलापों में संलग्न करना जो अवलोकन, वर्गीकरण, निष्कर्ष आदि के द्वारा मूलभूत

संज्ञानात्मक क्षमताओं, मनःप्रेरक कौशल, निरीक्षण, वर्गीकरण इत्यादि विकसित करें। डिज़ाइन व निर्माण, अनुमान व मापन पर ज़ोर देना ताकि वह बाद के स्तरों पर तकनीकी एवं संख्यात्मक कौशल विकसित होने में नींव का काम कर सके साथ ही इस स्तर पर मूलभूत भाषिक क्षमता को विकसित किया जाना चाहिए जिसमें बोलना, पढ़ना और लिखना शामिल हैं। ऐसा केवल विज्ञान पढ़ने के लिए नहीं बल्कि विज्ञान पढ़ते हुए भी करना जरुरी है। विज्ञान और सामाजिक विज्ञान को मिलाकर पर्यावरण अध्ययन करना उचित होगा जिसमें स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण अवयव हो। प्राथमिक स्तर की पूरी अवधि में किसी भी प्रकार की कोई परीक्षा न ली जाए न ही ग्रेड या अंक दिए जाए और न ही अगली कक्षा में जाने से रोका जाए।

उच्च प्राथमिक स्तर - इस स्तर पर बच्चों को विज्ञान के सरल सिद्धांतो की जानकारी देनी चाहिए लेकिन ऐसा आस-पास के परिचित दुनिया के माध्यम से ही होना चाहिए। साथ ही इसे तकनीकी इकाईयों और मॉड्यूल बनाने; उदाहरण के लिए कार उठाने के लिए पवन चक्की के संचालित मॉडल का डिज़ाइन बनाना और सर्वे व अन्य कार्यकलापों के माध्यम से पर्यावरण तथा स्वास्थ्य के बारे में जानने की ओर प्रेरित करना चाहिए। वैज्ञानिक सिद्धान्तों के बारे में जानकारी, प्रयोगों व कार्यकलापों के माध्यम से ही उचित है। विज्ञान की विषय वस्तु, इस स्तर पर माध्यमिक स्तर के विज्ञान का हल्का रूप नहीं होनी चाहिए। सामूहिक कार्यकलाप, साथियों और शिक्षकों के साथ बहस, आकड़ों के संग्रह और स्कूल एवं पड़ोस में इन सबका प्रदर्शनी के माध्यम से डिसप्ले, शिक्षण के महत्वपूर्ण अवयव होने चाहिए। निरंतर व नियमित 'आकलन' होना चाहिए (इकाई परीक्षा व सत्र अंत की परीक्षा)। प्रत्यक्ष ग्रेड्स की व्यवस्था अपनाई जानी चाहिए और फेल नहीं करना चाहिए। हर बच्चा जो स्कूल में आठ साल व्यतीत करता है उसे नवीं श्रेणी में प्रवेश पाने के योग्य मानना चाहिए।

माध्यमिक स्तर - इस स्तर पर विद्यार्थियों को विज्ञान की शिक्षा एक संयुक्त विषय के रूप में दी जानी चाहिए, जिसमें उच्च प्राथमिक स्तर से अधिक उन्नत तकनीकी की शिक्षा शामिल हो तथा स्वास्थ्य, जिसमें प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य भी आता है और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों से सम्बंधित गतिविधियाँ और विश्लेषण को उनमें शामिल किया जाना चाहिए। सैद्धांतिक आधारों को तलाशने/जाँचने के लिए व्यवस्थित प्रयोग तथा विज्ञान और तकनीकी से सम्बंधित स्थानीय महत्व की परियोजनाओं को पाठ्यचर्या के महत्त्वपूर्ण हिस्से के रूप में शामिल करना चाहिए।

उच्चतर माध्यमिक स्तर - इस स्तर पर विज्ञान को अलग-अलग विषयों के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए, जिसमें प्रयोगों/तकनीक तथा समस्या हल करने की प्रक्रिया पर बल दिया जाना चाहिए। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अब तक मौजूदा दो धाराओं, अकादमिक व व्यावसायिक, जिनका पालन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तहत किया जा रहा है, पर पुनर्विचार की ज़रूरत हो सकती है। विद्यार्थियों को अपनी अभिरुचि के विकल्प चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, हालाँकि प्रत्येक स्कूल में सभी विषयों का उपलब्ध होना संभव नहीं होता। माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक के बीच के गहरे अंतर को हटाने के लिए पाठ्यचर्या के बोझ को तर्कसंगत होना चाहिए। इस स्तर पर विषय के मुख्य पाठों की क्षेत्र में हुई वर्तमान प्रगति को ध्यान में रखते हुए सावधानीपूर्वक पहचान की जानी चाहिए। उन्हें उपयुक्त सख्ती तथा गहराई से शामिल किया जाना चाहिए। ढेरों विषयों की सतही जानकारी देने के प्रयास से बचना चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच 2

4.राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान के स्थान को स्पष्ट करें ?

____

____

3.5. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन

3.5.1. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद्

[National Council of Educational Research and Training(NCERT)]

यह भारत सरकार के द्वारा स्थापित उच्च स्तरीय संस्थान है जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में हैं और यह केंद्र एवं राज्य सरकारों को विद्यालय शिक्षा के अकादमिक मुद्दो पर सलाह एवं सहायता देती है।

विद्यालय स्तर पर विज्ञान शिक्षण में इसकी प्रमुख भूमिका है। 1975 में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या का प्रकाशन हुआ जिसमे यह बताया गया कि प्रथम दस वर्ष में विद्यालयी शिक्षा किस प्रकार होनी चाहिए और यह कोठारी कमीशन की अनुसंशाओं पर आधारित थी। इसके अनुसार प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण बच्चों के वातावरण पर आधारित होना चाहिए। उच्च प्राथमिक स्तर पर ज्ञान के अर्जन एवं तर्क संगत सोच के आधार पर निष्कर्ष निकलना है। निम्न माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के द्वारा मन एवं ज्ञान का संकाय विकसित करना चाहिए। भौतिकी, रसायन एवं जीव विज्ञान की नवीन अवधारणाओं और साथ ही विज्ञान अध्ययन के प्रायोगिक उपागम पर जोर दिया जाना चाहिए। देश के सभी भागो में इसके द्वारा प्रस्तावित पाठ्यचर्या को अपनाया गया।

राष्ट्रीय शिक्षण संस्थान

[National Institute oF Education (NIE)]

यह नई दिल्ली में स्थित है। यह अपने विभिन्न विभागों के द्वारा अनुसन्धान एवं पाठ्यचर्या से सम्बंधित शिक्षण कार्य करते है, पाठ्यचर्या की रुपरेखा और अन्य सहायक अनुदेशन सामग्री, विद्यालय आधारित प्रदत्तों और पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के अधिगमकर्ताओं के लिए प्रयोग करते हैं ताकि उनका पूर्ण विकास हो सके।

भौतिकीय विज्ञान अध्ययन समिति

(Phsyical Science Study Committee)

इसने भौतिकीय विज्ञान शिक्षण को विद्यालय स्तर पर पढ़ाने के पाठ्यक्रम को एक नयी दिशा प्रदान की। यह प्रायोजना सन् 1956 में मैसाच्युसेट्स प्रौद्योगिकी संस्थान, (Massachusets Technology Institute, Massachusets) के प्रोफेसर जीरोल्ड आर. जचेरिस (Prof. Zerrold R. Zacharias)के नेतृत्व में माध्यमिक विद्यालय से सम्बन्धित भौतिकीय विज्ञान पाठ्यक्रम पर पुनः विचार किया गया। पी.एस.एस.सी. परियोजना को शुरू करने में राष्ट्रीय विज्ञान संस्थान ने प्रारंभिक रूप से आर्थिक मदद की। विश्वविद्यालय के भौतिकीय विज्ञान के प्रोफेसरों के नेतृत्व में एक दल तैयार किया गया। इस दल के सदस्यों ने विद्यालय स्तर के भौतिकीय अध्यापकों एवं शिक्षाविदों से विचार-विमर्श किया कि भौतिकीय विज्ञान के पाठ्यक्रम को नयी दिशा (आयाम) प्रदान करने

के लिए क्या-क्या आवश्यक है, जिससे इसमें आवश्यक सुधार हो। सामान्य परिचर्चा के बाद दल को उप-समूहों में विभक्त किया गया। इन उप-समूहों को भौतिकीय पाठ्यक्रम में नये आयाम जोड़ने के संदर्भ में आवश्यक सामान तैयार करने के लिए तथा आवश्यक सामग्री लिखने के लिए नियुक्त किया गया।

भौतिकीय विज्ञान अध्ययन समिति द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रम का क्रांतिकारी सिद्धान्त यह था कि भौतिकीय शास्त्र को खोज की एक कहानी के रूप में दर्शाया जाए न कि उसे केवल सत्यों का एक समूह मात्र समझा जाए। इसीलिए इस बात पर अधिक बल दिया गया कि विद्यार्थी प्रयोगशाला का प्रयोग केवल जाँच के लिए ही न करें, बल्कि किसी नई घटना के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करें, जिससे विद्यार्थियों में समस्या से जूझने की प्रवृत्ति का विकास हो सके। इसके लिए नये-नये उपकरणों को विकसित किया गया, जिससे बालकों में परिकल्पनाओं के परीक्षण की दक्षता विकसित हो सके तथा प्रेरणादायी सृजन-प्रक्रिया के द्वारा मानसिक कार्य की बाधाएँ दूर की जा सकें।

नफील्ड भौतिकीय परियोजना का पाठ्यक्रम

(**Nuffield Phsyics Project and Curriculum**)

नफील्ड विज्ञान का वास्तविक कार्यक्रम नवीन सहायक सामग्री का निर्माण कर biology, Chemistry and Physics से सम्बन्धित विद्यालय स्तर पर सहायक सामग्री उपलब्ध कराना था। पंचवर्षीय पाठ्यक्रम को तीन (Biology, Chemistry and Phsyics) विज्ञानों में विभक्त कर 11-16 साल की आयु के छात्रों के लिए 7-11 स्तर पर अध्ययन हेतु रखा गया। इस योजना के अन्त में नवीन प्रकार की मूल्यांकन विधि को भी अपनाया गया। इनकी वास्तविक 0-level की योजना (कार्यक्रम रूपरेखा) को सन् 1966 में प्रकाशित किया गया। इस समय बहुत से विद्यालय इसका उपयोग कर रहे हैं, लेकिन यह सार्वभौमिक रूप से स्वीकार नहीं है। नफील्ड भौतिकीय परियोजना द्वारा कुछ समय पश्चात् G.C.E.O. स्तर पर भौतिकी, रसायन एवं जीव विज्ञान के विषयों के लिए अलग-अलग सामान उत्पादित किया गया। यह समूह संयुक्त रूप से भौतिक विज्ञान पाठ्यक्रम के रूप में विकसित हुआ। सन् 1967-68 में नफील्ड परियोजना के अन्तर्गत माध्यमिक स्तर पर सामान्य विद्यार्थियों हेतु विज्ञान की व्यवस्था को विकसित किया गया।

भौतिकीय विज्ञान की पाठ्यचर्या में सुधार लगभग विश्वव्यापी है, परन्तु ब्रिटेन में इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सुधारात्मक प्रयत्न हो रहे हैं। विद्यार्थियों में समयानुकूल व्यावहारिक परिवर्तन लाने के लिए उचित पाठ्यक्रम का होना नितान्त आवश्यक है। हमें पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय यह देख लेना आवश्यक है कि पाठ्यक्रम द्वारा हमारे उद्देश्यों की पूर्ति हो रही है अथवा नहीं। ब्रिटेन में नवीन प्रवृत्तियों का अध्ययन कर नवीन पाठ्यक्रम तैयार करने में नफील्ड संस्थान ने उल्लेखनीय कार्य किया है। संस्थान द्वारा यह ध्यान में रखा गया है कि जो छात्र 16 वर्ष की आयु के बाद विद्यालय छोड़ देते हैं, उन्हें भौतिकीय विज्ञान का ज्ञान कराना जरूरी है तथा दूसरी ओर उन छात्रों की आवश्यकता की पूर्ति की जा सके, जो विषय का गहन अध्ययन करना चाहते हैं तथा शोध कार्य में रूचि रखते हैं।

इस संस्थान द्वारा तैयार पाठ्यक्रम में जिन बातों को ध्यान में रखा गया, वे निम्नलिखित हैं:-

(1) छात्रों पर पुराना ज्ञान लादने की अपेक्षा उनमें नवीन ज्ञान की खोज की प्रवृत्ति विकसित करना।

(2) वैज्ञानिक नियमों तथा सिद्धान्तों को रटने की प्रवृत्ति तथा बिना पूर्वपरीक्षा के स्वीकार कर लेने की बजाय उचित प्रमाण और अनुभवों के आधार पर स्वीकार करना।

(3) छात्रों को प्रश्न पूछने, शंकाओं को दूर करने, परीक्षण और प्रयोग करने, उचित छानबीन एवं आलोचना करने तथा अन्वेषणात्मक प्रवृत्ति को क्रियात्मक रूप देने का पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त कराना।

द कैमिकल बांड एप्रोच

(The Chemical Bond Approach (C.B.A.))

यह उपागम इस केन्द्रीय प्रतिपाद्य पर आधारित है कि रसायन विज्ञान का आधार रासायनिक बन्ध है। रसायन विज्ञान का सम्पूर्ण कोर्स इस प्रमुख बिन्दु पर विकसित होता है कि विद्यार्थियों में रसायन विज्ञान की अवधारणाओं, सिद्धान्तों और प्रमुख विचारों के प्रत्यय विकसित हों। इस नवीन उपागम में तथ्यों के पुलिन्दों को प्रस्तुत करने की विधि को गौण स्थान मिला। रासायनिक बन्धन के केन्द्रीय प्रतिपाद्य के साथ-साथ दूसरे मुख्य प्रत्ययों को इस प्रकार प्रस्तावित किया गया कि वे पूरे कोर्स में अन्तर्निहित स्वरूप में बने रहे। परिणामस्वरूप यह अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थियों में रासायनिक क्रिया में अन्तर्निहित आन्तरिक और अदृश्य कारकों को चित्रित करने का विकास हो।

वैज्ञानिक चिन्तन के विकास के लिए प्रतिरूप निर्माण दृश्य संसाधन है। इसका उपयोग सम्पूर्ण कोर्स में किया जाता है। कुछ सरल परमाणुओं और अणुओं की संरचना के निगमन के लिए इलेक्ट्रोनिक प्रकृति के विषय में अभिग्रहों के विमर्श के लिए इलेक्ट्रोस्टेटिक प्रतिपाद्य आधार बनता है। कुलम्ब के नियम के गुणात्मक और संख्यात्मक दोनों निहितार्थों का अनिवार्य रूप से अन्वेषण किया गया, क्योंकि आगे आयोनिक पदार्थों और पीरियाडिसिटी के विमर्श में उनकी आवश्यकता पड़ती है। यहाँ यह नियम केन्द्रीय प्रशासी सिद्धान्त के रूप में प्रयोग किया जाता है।

सम्पूर्ण कोर्स में दूसरा आधारित प्रतिपाद्य ऊर्जा की अवधारणा है। धीरे-धीरे सी.बी.ए. स्वतंत्र ऊर्जा को प्रस्तावित करता है। विद्यार्थी से अपेक्षित है कि वह रासायनिक अभिक्रियाओं के बन्धों, ऊर्जा और संरचनात्मक सामग्रियों की अन्तर्सम्बन्धता को आत्मसात् करें।

द केमिकल एजूकेशन मैटीरियल स्टडी

(CHEM Study)

कैम स्टडी सामग्रियाँ रसायन विज्ञान में अवधारणाओं सिद्धान्तों, विचारों के विकास के इर्द-गिर्द समाकलित है। विद्यार्थियों द्वारा रासायनिक अभिक्रियाओं के अन्वेषण का आधार विज्ञान की प्रयोगात्मक प्रकृति है। जटिल रासायनिक घटनाओं के बोध और निर्वचन के लिए निम्नलिखित पर विशेष बल विद्यार्थियों के लिए मार्गदर्शक हैं। रासायनिक व्यवस्था की संरचना, इलेक्ट्रान की संरचना, परमाणुओं की ज्यामितीय व्यवस्थापन, उनके सापेक्ष आकार और प्रकृति, उनके मध्य बल तथा वे कैसे रसायन विज्ञान को प्रभावित करते हैं।

पाठ्यवस्तु रसायन विज्ञान के विहंगावलोकन से शुरू होती है। शनैः शनैः प्रमुख सामान्यीकरणों से परिचित कराया जाता है। इनमें प्रमुख इस प्रकार हैं - ऊर्जा और रासायनिक अभिक्रिया, रासायनिक अभिक्रियाओं की दर, साम्यावस्था और रासायनिक अभिक्रिया और उनकी संरचना, रासायनिक गुणधर्मों की पीरियाडिसिटी, इलेक्ट्रान संरचना। प्रयोगों के द्वारा इन सामान्यीकरणों के विकास के उपरान्त विद्यार्थियों से अपेक्षा की जाती है कि वे अधिक जटिल प्रत्ययों के बोध का उपयोग करेंगे।

3.5.2. पाठ्यपुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन

पाठ्य-पुस्तकें शिक्षण प्रक्रिया में अध्यापक तथा छात्र दोनों का ही मार्गदर्शन करती है। कहा भी गया है कि - "जैसी पाठ्य-पुस्तक होंगी, वैसा ही शिक्षण भी होगा।" पाठ्य-पुस्तक की सहायता से अध्यापक कक्षा में शिक्षण-अधिगम की अनुकूल परिस्थितियों के निर्माण तथा विद्यार्थियों के व्यवहारों में अपेक्षित परिवर्तन करने के लिये अपने शिक्षण की समुचित रूपरेखा तैयार कर सकता है। सौभाग्य से आज के मशीनी युग ने पाठ्य-पुस्तक की सुविधा मानव को प्रदान की है।

पाठ्य पुस्तकों का चुनाव करने से पूर्व यह आवश्यक है कि वस्तुनिष्ठ मानदण्डों (Objective Criteria) के आधार पर उनका मूल्यांकन किया जाये। इसके अतिरिक्त पाठ्य-पुस्तक का मूल्यांकन करने के लिये निम्न मानदण्ड (Criteria) का प्रयोग किया जा सकता है-

1. पुस्तक का यान्त्रिक पहलू - इसके अंतर्गत पाठ्य पुस्तक का बाह्य स्वरूप (Appearance or Get-up), आकार, पृष्ठ संख्या, ज़िल्द, कागज की किस्म, छपाई की स्पष्टता, सज-धज आदि सम्मिलित है।
2. पाठ्य-पुस्तक की व्यवस्था - इस मानदण्ड के अनुसार पाठ्य-पुस्तक के भीतर विषय का विभाजन, उसकी श्रृंखला-बद्धता, तार्किकता, सारांश तथा अभ्यासार्थ प्रश्नों की व्यवस्था पर ध्यान दिया जाता है।
3. प्रस्तुतीकरण - इसके अन्तर्गत पाठ्य-पुस्तक की भाषा-शैली, उसमें प्रयुक्त शब्दावली, प्रतिपादन पद्धति, विषय की स्पष्टता एवं बोधग्राह्यता आदि निहित है।
4. उदाहरण - इसके अन्तर्गत मानचित्रों, चार्ट, रेखाचित्र, ग्राफ आदि की शुद्धता, वस्तुनिष्ठता, स्पष्टता, उपयोगिता, यथास्थानता, वास्तविकता, उपयुक्तता, रोचकता तथा आकार आदि पर विचार किया जाता है। पाठ्य-पुस्तक के लिये ये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
5. अभ्यासार्थ प्रश्न - प्रत्येक पाठ के अन्त में दिये गये अभ्यासार्थ प्रश्नों का विषय-वस्तु से सम्बन्ध, उनकी व्यापकता, प्रेरणात्मक, शक्ति, स्पष्टता, शुद्धता, विश्वसनीयता तथा कठिनाई स्तर निर्धारित करना आवश्यक है। इन मानदण्ड के अनुसार अभ्यासार्थ प्रश्नों का मूल्यांकन इन्हीं दृष्टियों से किया जाता है।
6. अनुक्रमणिका अथवा विषय-सूची - पाठ्य-पुस्तक में प्रयुक्त सहायक ग्रन्थों की सूची तथा निर्देशन की छात्रों तथा शिक्षकों की दृष्टि से उपयोगिता, उसकी व्यावहारिकता, निश्चितता, उपलब्धता, विश्वसनीयता एवं वैधता पर विचार करना परमावश्यक है। इस मानदण्ड के अन्तर्गत मूल्यांकनकर्ता इन सभी बातों पर विचार करता है।
7. लेखक - इसके अन्तर्गत लेखक की योग्यता, लेखन तथा शिक्षण-अनुभव, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा वर्तमान व्यवसाय आदि पर विचार करना होता है। यह पाठ्य-पुस्तक के मूल्यांकन का महत्वपूर्ण पक्ष है।
8. उपरोक्त मानदण्डों के आधार पर एक पंच-पद रेटिंग स्केल (Five-Point Rating Scale) का निर्माण किया जाता है तथा पाठ्य-पुस्तक की प्रत्येक विशेषता के सम्बन्ध में अंक निर्धारित किए जाते हैं, जिनका स्वरूप अग्र प्रकार हो सकता है-

वर्गीकरण (Classification)	**अंक (Marks)**
सर्वोत्कृष्ट (Excellent)	5
अच्छा (Good)	4

साधारण (Average)	3
निकृष्ट (Poor)	2
निकृष्टतम (Poorest)	1

इस मानदण्ड के अनुसार पाठ्य-पुस्तक की रेटिंग इन पाँच पदों में की जाती है। रेटिंग के बाद उन्हें आंकिक रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। सर्वोत्कृष्ट के लिये 5 अंक, अच्छा के लिए 4 अंक, साधारण के लिए 3 अंक, निकृष्ट के लिए 2 अंक तथा निकृष्टतम के लिए 1 अंक प्रदान किया जाएगा। इस प्रकार हम पाठ्य पुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन कर सकते है।

अपनी प्रगति की जाँच 3

5. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम कौन से हैं ? स्पष्ट करें।

____

____

3.6. नवाचार आधारित पाठ्यक्रम

Hoshangabad Science Teaching Program (HSTP)

यह सूक्ष्म स्तर पर हस्तक्षेप करने वाले कार्यक्रमों में से एक है जो बाद में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 1978 में अपनाया गया और राज्य भर के एक हज़ार से ऊपर स्कूलों में लागू किया गया। इसके द्वारा किए गए कुछ नए संरचनात्मक परिवर्तन (उदाहरण के लिए संयुक्त संसाधन केंद्र) बड़े स्तर की योजनाओं में भी अपनाए गए। इसका 30 वर्ष का इतिहास हमें व्यापक पाठ्यचर्या की महत्ता के प्रति प्रेरित करता है जिसमें पाठ्यपुस्तक, शिक्षकों का प्रशिक्षण, स्कूलों द्वारा क्रियान्वयन पर कड़ी निगाह, बच्चों और शिक्षकों से प्रतिक्रिया जानना और दूसरे तरीके जो शिक्षकों के लिए सहायक हों और परीक्षा के लिए भी महत्वपूर्ण हों शामिल हैं। एच.एस.टी.पी. के फलस्वरूप बनी एकलव्य संस्था एक गैर सरकारी संगठन (एन.जी.ओ) है जो स्कूली शिक्षा में क्रांति लाने की घोषणा के साथ जन्मी। इस के प्राथमिक स्तर के कार्यक्रम 'प्राशिका' ने प्राथमिक स्तर के पाठ्यचर्या निर्माण कार्यक्रम के लिए कई महत्वपूर्ण दृष्टांत प्रस्तुत किये।

3.7 विज्ञान के प्रचार में स्वयं सेवी संगठनो की भूमिका

विज्ञान के प्रचार एवं प्रसार में स्वयं सेवी संगठनो की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। आज के आधुनिक युग में विज्ञान के प्रति जागरूकता एवं साक्षरता बहुत जरुरी है और इसे हम लोगो के सहयोग के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। विज्ञान के प्रति जागरूकता समाज को आधुनिक बनाने एवं उसे तकनीकी रूप से सक्षम बनाने के लिए अति आवश्यक है। इस दिशा में अनेक स्वयं सेवी संगठन कार्य कर रहे हैं।

नेहरु फाउंडेशन की स्थापना अहमदबाद में 1966 में की गयी। समाज में विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए सामुदायिक विज्ञान केंद्र खोला गया। इसी तर्ज पर कोलकाता में बिरला इंडस्ट्रियल टेक्निकल संग्रहालय, विश्वेस्वरैया इंडस्ट्रियल टेक्निकल संग्रहालय बंगलोर में , नेहरु विज्ञान केंद्र मुंबई में स्थापित किये गए।

किशोर भारती स्वयं सेवी संगठन ने मध्य प्रदेश के पालिया पिपरिया के एक गाँव को वैज्ञानिक साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत लोगो को शिक्षित करने के कार्य का किया। आंध्र प्रदेश में, आंध्र प्रदेश विज्ञान केंद्र स्थापित किए गए जो कि वैज्ञानिक गतिविधि जैसे विज्ञान मेला एवं विस्तार व्याख्यान के द्वारा लोगो में विज्ञान के प्रति जागरूकता ला रहे हैं।

स्वयं सेवी संगठन मुख्यत: प्रक्षिक्षण, विस्तार एवं प्रकाशन के क्षेत्र में कार्य करते हैं। भारत सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे यूनेस्को और यूनिसेफ के साथ अनुबंध कर अनेक विज्ञान शिक्षण प्रोजेक्ट विद्यार्थियों के लिए चलाये हैं।

स्वयं सेवी एवं गैर सरकारी संगठनो के द्वारा आयोजित कार्यक्रम

जवाहर बाल भवन - यह संस्थान स्वतंत्रता के पश्चात पंडित जवाहरलाल नेहरु के नाम पर देश के विभिन्न राज्यों में खोला गया। यह चौदह वर्ष से कम उम्र के बच्चो के लिए था। यह भवन बच्चो को चित्रकारी, नाटक और अनेक प्रकार की गतिविधि जैसे गाना, वाद्य यंत्र बजाना, बागवानी आदि का प्रशिक्षण देते हैं। यह संगोष्ठी, व्याख्यान, वाद-विवाद ,विज्ञान मेला आदि का आयोजन करते हैं। यहाँ विज्ञान,कला आदि से सम्बंधित पुस्तको का प्रकाशन भी किया जाता है।

किशोर भारती - इस स्वयं सेवी संगठन की स्थापना मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिला के पालिया पिपरिया गाँव में हुई थी। इस संगठन का उद्देश्य ग्रामीण विकास के क्षेत्र में कार्य करना और युवाओं को विज्ञान की अवधारणा से परिचित कराना है इस संगठन ने विद्यालय में विज्ञान शिक्षण को सुधारने के क्षेत्र में कई कार्य किये हैं। इस संगठन ने विज्ञान पाठ्यचर्या का निर्माण किया है, मूल्यांकन विधि विकसित की है, जो कि ग्रामीण विद्यार्थियों की जरुरत के अनुरूप हैं। इसके द्वारा विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन तथा पुस्तकों का प्रकाशन भी किया गया हैं।

विक्रम साराभाई सामुदायिक विज्ञान केंद्र - यह केंद्र विक्रम साराभाई के द्वारा 1966 में अहमदाबाद में स्थापित किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य विज्ञान प्रौद्योगिकी के द्वारा शैक्षिक एवं सामाजिक विकास था। यह केंद्र शिक्षकों, वैज्ञानिको और विद्यार्थियों को प्रशिक्षण देता हैं।

आंध्र प्रदेश विज्ञान केंद्र - आंध्र प्रदेश में 1974 में स्थापित किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य है विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र का विकास शिक्षको को विज्ञान के परियोजना में प्रशिक्षित करना और वर्तमान में चल रहे विज्ञान के विकास के बारे में सूचना देना विद्यार्थियों में सृजनात्मकता एवं तार्किक सोच का विज्ञान प्रदर्शनी, मेला, संगोष्ठी, वाद- विवाद आदि के द्वारा विकास किया जाता है।

द नेचर क्लब ऑफ़ इंडिया (The Nature Club of India) - इस क्लब की स्थापना वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फण्ड के द्वारा की गयी। इसका मुख्य उद्देश्य प्रकृति के महत्व के प्रति जागरूकता एवं उसको संरक्षित एवं सुरक्षित रखने के लिए कार्य करना है। इसके सदस्य विद्यालय के विद्यार्थी होते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच 4

6.विज्ञान शिक्षण में स्वयं सेवी संगठनो की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

____

____

3.8. भौतिकीय विज्ञान के संदर्भ में निर्माणवाद की व्याख्या और निहितार्थ

निर्माणवाद ऐसा शैक्षिक उपागम जिसमे यह मान्यता रहती है कि बच्चा स्वयं ज्ञान का निर्माता होता है, शिक्षक केवल उसे मार्गदर्शन और उसका रास्ता सुगमकारी बनाते है।

इसका अधर अवलोकन तथा वैज्ञानिक अवलोकन करना है। इसका मानना है कि लोग अपने ज्ञान तथा समझ का निर्माण स्वयं ही सृजित करते है तथा इस ज्ञान एवं समझ को सृजित करने का आधार उनका अनुभव तथा उन अनुभवों पर किया जाने वाला आलोचनात्मक तार्किक विश्लेषण है। ऐसा करने हेतु हमें प्रश्न उठाना होगा, खोज करना होगा, एक्स्प्लोर करना होगा तथा स्वयं ही मूल्यांकन करना होगा कि हम क्या जानते है ? अधिगम का निर्माणवाद दृष्टिकोण कक्षा के दौरान विभिन्न गतिविधयों की चर्चा करते हैं अत: इसका सामान्य अर्थ है कि यह विद्यार्थियों विभिन्न सहायताओं तथा अवसरों के द्वारा ज्ञान निर्माण की बात करता है तथा उस ज्ञान पर आत्म- आलोचना करने तथा यह बात करने की, कि वह क्या कर रहा है ? और कैसे उसके समझ में बदलाव आ रहा है। विज्ञान कक्षा में निर्माणवाद के कुछ मुख्य तत्व हैं जो पारम्परिक कक्षा से अलग हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा - 2005 के अनुसार विज्ञान कक्षा निर्माणवाद अधिगम के लिए सबसे उपयुक्त है। विज्ञान कक्षा का वातावरण इस प्रकार निर्मित होता है कि विद्यार्थी कक्षा अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय रूप से नए ज्ञान एवं विचार के निर्माण में भाग लेते है और शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक विभिन्न प्रकार के उपागमो के उपयोग करते है जो विद्यार्थियों से प्रश्न पूछने, मनन, तर्क,सोच-विचार एवं पूर्व अधिगम अनुभवों का नए अनुभवों के साथ ताल मेल करने की क्षमता का विकास करते हैं।

3.8.1. विज्ञान के निर्माणवाद कक्षा की विशेषता

बाल केन्द्रित - निर्माणवाद पद्धति में विज्ञान शिक्षण के दौरान विद्यार्थी मुख्य भूमिका में होते हैं। शिक्षकों के द्वारा कक्षा प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थियों को अधिक से अधिक अवसर देना चाहिए ताकि वे अधिक से अधिक प्रश्न पूछ सके।

विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान को महत्व देना चाहिए - विद्यालय अनुभव से पूर्व विद्यार्थियों के पास वास्तविक प्रक्रिया का पूर्व अनुभव रहता है। अधिकांश प्राकृतिक प्रक्रियाओं की वैज्ञानिक अवधारणा विद्यार्थियों की अवधारणाओं से भिन्न होती है। कुछ शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी उन अर्थो का निर्माण करते है जो उनके पूर्व अनुभवों एवं उम्मीदों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हैं और जो शिक्षक के द्वारा अपेक्षित अर्थ से अलग होते है। जिसके परिणाम स्वरुप विद्यार्थी संज्ञानात्मक द्वन्द का अनुभव करते हैं। वे इन द्वन्द का निवारण विद्यालय विज्ञान को अपने जीवन अनुभव से अलग रखकर करते हैं और इस प्रकार विद्यार्थी वैज्ञानिक समझ को वास्तविक दुनिया से अलग करते हैं। जैसा चाँद का चमकीला होना, चाँद की दिशा बदलना, भोजन का ख़राब होना, बरसात में मछलियों का गिरना आदि वैकल्पिक अवधारणाओं का निराकरण करना। निर्माणवादी कक्षा में शिक्षण अधिगम के दौरान विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान को जानना एवं प्रोत्साहन देना चाहिए। शिक्षको को कक्षा में इस प्रकार का वातावरण देना चाहिए ताकि विद्यार्थी स्वयं को कक्षा में आरामदायक स्थिति में रखे जहाँ वह अपने विचारों को मुक्त रूप में प्रदर्शित कर पाए।

निर्माणवादी विज्ञान कक्षा में प्रक्रिया उपागम पर ज़ोर -

विज्ञान शिक्षण में प्रक्रिया उपागम एक प्रकार की युक्ति है। कक्षा में एक अवधारणा का निर्माण किया जाता है जिसमे विद्यार्थी नए विचारों एवं अनुभवों को खोजते है और छात्रों को विभिन्न प्रकार के अवसर प्रदान किये जाते

है ताकि वे प्रयोग कर सके तथा विभिन्न गतिविधियों में भाग ले। शिक्षक विभिन्न प्रकार की गतिविधियों का निर्माण अलग अलग अवधारणाओं और विषय वस्तु के अनुसार करते हैं जो विद्यार्थियों के ज्ञान के निर्माण में सहायक होते हैं।

निर्माणवादी विज्ञान कक्षा में विद्यार्थी सम्पूर्ण से अंश के रूप में अधिगम करते हैं -

निर्माणवादी विज्ञान कक्षा में शिक्षक पाठ्यचर्या को सम्पूर्ण रूप में प्रस्तुत करते हैं न कि अंश के रूप में। शिक्षक निर्देशन सामग्रियों को अवधारणाओं के समूह के रूप में रखते है। जैसे - ऊर्जा, प्रदूषण, अभिक्रिया आदि। निर्माणवादी विज्ञान कक्षा में विषयों के मध्य आंशिक विभेदीकरण होता है और विद्यार्थियों के दुनिया को देखने के नजरिये पर ज़ोर दिया जाता है।

निर्माणवादी विज्ञान कक्षा में मूल्यांकन शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में ही निहित होता है -

इसमें मूल्यांकन दैनिक शिक्षण के आधार पर होता है। यह मूल्यांकन सतत एवं व्यापक है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या - 2005 के अनुसार अवलोकन के आधार पर दैनिकी बनाना मूल्यांकन का एक आधार है। इस अवधारणा में मूल्यांकन अलग नहीं रखा गया है अतः उसे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का ही एक अंग माना गया है।

अध्यापक की भूमिका - निर्माणवाद में अध्यापक की भूमिका अधिगम के लिए वातावरण बनाने वाले की होती है। वे पारंपरिक कक्षा के अधिगम की अवधारणा एवं सोच को चुनौती देते है। निर्माणवादी शिक्षक एक सहयोगकर्ता के रूप में होता है और विद्यार्थियों को ज्ञान के निर्माण के लिए अनुभव देता है। भौतिकीय विज्ञान निर्माणवाद उपागम विशेष रूप से इस बात पर बल डालता है कि किस प्रकार विद्यार्थियों को ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया का हिस्सा बनाया जाये। इसी विचार तथा उपर्युक्त समझ के आधार पर निर्माणवाद विज्ञान कक्षा के पाठ्य योजना का प्रारूप निम्न चक्र पर आधारित हो सकता है:

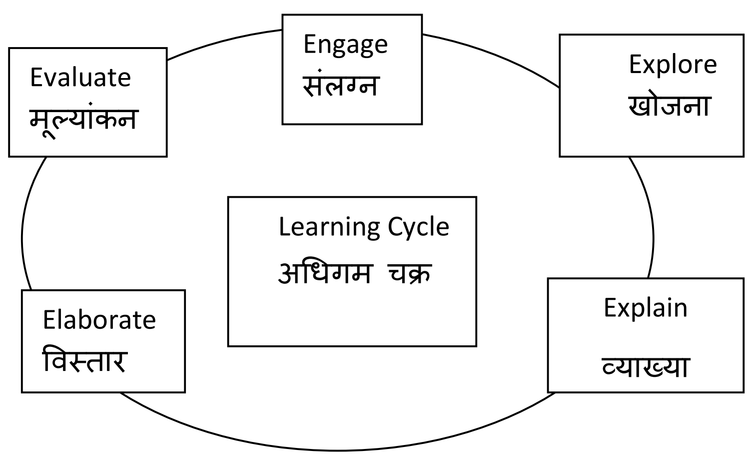

निर्माणवाद का '5 Es' अधिगम चक्र

अपनी प्रगति की जाँच 5

7.भौतिकीय विज्ञान के संदर्भ में निर्माणवाद की व्याख्या कीजिए।

3.9. सारांश

इस अध्याय में हमने विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्यों के बारे में जाना। ब्लूम ने शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण इस आधार पर किया कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाये जा सकते हैं। ब्लूम ने व्यवहार के तीन पक्षों- ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों के आधार पर शैक्षिक उद्देश्य का वर्गीकरण किया है। शैक्षिक उद्देश्यों को ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक उद्देश्यों के नाम से जाना जाता है। विद्यार्थी के व्यवहार के प्रत्येक पक्ष के विभिन्न स्तर होते हैं। इन स्तरों के अनुरूप शिक्षण उद्देश्यों को सरल से कठिन एवं निम्न से उच्च स्तर की दिशा में वर्गीकृत किया गया है। ज्ञानात्मक उद्देश्य- ज्ञान, बोध, प्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण और मूल्यांकन से सम्बन्धित होते हैं। भावात्मक उद्देश्यों में आग्रहण, प्रतिक्रिया, आकलन, संगठन तथा मूल्यों का चरित्रीकरण आदि सम्मिलित है। इसी प्रकार क्रियात्मक उद्देश्यों में कार्य करना, स्पष्ट उच्चारण, निर्देशात्मक प्रतिक्रिया, जटिल प्रत्यक्ष क्रिया, कौशल युक्त अंग संचालन, सांकेतिक सम्प्रेषण, प्रत्यक्षीकरण, आदि सम्मिलित होते हैं। इस इकाई में हमने नवाचार आधारित पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तक का आलोचनात्मक अध्ययन के मान-दण्ड के बारे में भी जाना। विज्ञान के प्रचार प्रसार में स्वयं सेवी संगठनों की भूमिका अथवा विज्ञान शिक्षण में निर्माण वाद की अवधारणाओं एवं निहितार्थो को समझा।

3.10. अपनी प्रगति के जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

1. 3.3. विद्यालय स्तर पर विज्ञान के सीखने-सिखाने के लक्ष्य एवं उद्देश्य
2. 3.3.1. विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य
3. 3.3.4. उद्देश्यों के वर्गीकरण का आधार
4. 3.4.2. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में विज्ञान का स्थान
5. 3.5.1. विज्ञान शिक्षण के प्रचलित पाठ्यक्रम
6. 3.7. विज्ञान के प्रचार में स्वयं सेवी संगठनो की भूमिका
7. 3.8. विज्ञान के संदर्भ में निर्माणवाद की व्याख्या और निहितार्थ

3.11. संदर्भ ग्रन्थ

1. ओबराय, एस. सी. - 'शिक्षण-अधिगम के मूल तत्व',शोभित प्रकाशन, भिवानी 1998.
2. शर्मा, रवीन्द्र कुमार - 'शिक्षण अधिगम के मूल तत्व' श्री राम पब्लिकेशन, भिवानी, 2000.
3. शर्मा, आर. ए. - 'शिक्षण अधिगम के मूल तत्व' लायल बुक डिपो, मेरठ, 1989.
4. मंगल, एस. के - 'शिक्षण-अधिगम के मूल तत्व' आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 1997.
5. छिकारा, एम. एस. एवं शर्मा, एस.- 'Teaching of Biology', Parkash Brothers,ludhiana, 1982.
6. सूद, जे. के. - 'New Directions in Science Teaching' Kohli Publishers, Chandigarh, 1989.
7. अमीता,पी.- 'Methods of Teaching Biological Science', Neelkamal Publications, Hyderabad, 2006.

8. शर्मा,एच. एस. , तिवारी, ए एवं पराशर,आर.-'विज्ञान शिक्षण के नए आयाम' राधा प्रकाशन मंदिर,आगरा,2007

इकाई- 4 – सीखना सिखाना

4.0 शिक्षण उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 वैज्ञानिक घटनाओं के प्रति बच्चों की समझ
4.3 बच्चों की वैकल्पिक अवधारणाएँ और इसके शिक्षा शास्त्रीय निहितार्थ
4.4 विज्ञान सीखने सिखाने में प्रेक्षण-प्रयोग, खोज और अन्त: प्रज्ञा (सूक्ष्म) की भूमिका
4.5 शिक्षण शास्त्रीय युक्तियां समस्या समाधान, खोज प्रदर्शन, प्रयोग, सामूहिक गतिविधियाँ, क्षेत्र अध्ययन, अवलोकन, वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम, कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन
4.6 विज्ञान मेला व विज्ञान प्रोजेक्ट
4.7 विज्ञान सीखने सिखाने में आइ. सी. टी. का प्रयोग, ई-लर्निंग
4.8 निकटवर्ती परिवेश से सीखने – सिखाने के संसाधनों को खोजना और कक्षा में उनका प्रयोग करना
4.9 विज्ञान किट का निर्माण
4.10 विज्ञान में प्रायोगिक कार्य के द्वारा सीखना – सिखाना
4.11 सारांश
4.12 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 शिक्षण उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप –

1. विज्ञान शिक्षण की विभिन्न विधियों का वर्णन कर सकेंगे।
2. विज्ञान शिक्षण की विभिन्न विधियों के प्रमुख चरणों, गुणों तथा सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।
3. विज्ञान शिक्षण में पाठ्य सहगामी एवं अनौपचारिक उपागमों के महत्व को समझ सकेंगें।
4. विज्ञान शिक्षण हेतु प्रत्यक्ष अवलोकन, प्रयोग एवं खोज की भूमिका के विषय में समझ विकसित कर सकेंगें।

4.1 प्रस्तावना

शिक्षण अथवा अध्यापन विधियों का शिक्षा के उद्देश्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षण-विधियों का उद्देश्य केवल बालकों को कुछ बातों का ज्ञान प्रदान करना ही नही, बल्कि अध्यापक और बालकों के पारस्परिक सम्बन्धों में सजीवता लाना है। शिक्षण-विधियाँ बालकों के मस्तिष्क के साथ-साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व, बुद्धि, भावना, मूल्यों और मनोवृतियों पर भी प्रभाव डालती हैं। जो शिक्षण-विधियाँ मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक

दृष्टिकोण से उपयुक्त होती हैं वे ही बालकों के व्यक्तित्व के समस्त गुणों का विकास करने मे सहायक होती हैं। अतः विधियों का चुनाव करते समय अध्यापक को विज्ञान विषय के उद्देश्यों को सदैव ध्यान में रखना चाहिए। इन उद्देश्यों के अन्तर्गत बालकों का मानसिक, सामाजिक एवं नैतिक विकास आता है। यह विकास तभी सम्भव है, जब शिक्षण-विधियाँ उपयुक्त एवं प्रभावशाली हो। पिछली इकाईयों में विज्ञान के सम्बन्ध में 'क्या' पढ़ाया जाए तथा 'क्यों' पढ़ाया जाए विषयों पर विचार किया गया है, परन्तु विज्ञान को प्रभावशाली ढंग से 'कैसे' पढाया जाए ? यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। विज्ञान का ज्ञान 'बच्चों' को कैसे देना है' ? अथवा बालकों को विज्ञान किस प्रकार सिखाना' है ? इस प्रकार के अनेक प्रश्नों के उत्तर जानना शिक्षक के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
शिक्षण विधि शिक्षण का सबसे महत्वपूर्ण अंश है। शिक्षण में विभिन्न विधियों का प्रयोग मनोवैज्ञानिक विश्लेषण एवं परिवर्तन लाता है। शिक्षण विधियाँ एक प्रारूप है जो कि अधिगम सिद्धान्त, शिक्षण की प्रकृति तथा विषयवस्तु की आवश्यकता पर आधारित होता है। प्रारूप की विशिष्टता एवं दृढ़ता एक प्रकार की शैक्षिक युगचेतना का विकास करती है। शिक्षण विधियों में परिवर्तन एक विकासशील प्रविधि है, तदनुसार अनेक शिक्षण विधियों के पैटर्न उभरकर सामने आये हैं, जैसे-समूह शिक्षण विधियाँ, वैयक्तिक शिक्षण विधियाँ, प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षण विधियाँ, शिक्षक केन्द्रित शिक्षण, छात्र केन्द्रित शिक्षण आदि। इस इकाई में हम विज्ञान शिक्षण हेतु सीखने सिखाने के प्रत्यय के विषय में अध्ययन करेंगें।

4.3 वैज्ञानिक घटनाओं के प्रति बच्चों की समझ

विज्ञान (Science) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'Scientia' से हुयी है, जिसका शाब्दिक अर्थ है सीखना परन्तु इसका व्यापक अर्थ ज्ञान से है। डेम्पियर के अनुसार –''विज्ञान को प्राकृतिक घटनाओं के व्यवस्थित ज्ञान और अवधारणाओं जिनमें ये घटनाएँ व्यक्त की जाती हैं, के मध्य सम्बन्धों के विवेकपूर्ण अध्ययन के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।'' इस प्रकार विज्ञान के अध्ययन में छात्रों में प्राकृतिक घटनाओं के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण व समझ का विकास किया जाता है। विज्ञान हमारे दैनिक जीवन में, प्राकृतिक घटनाओं को समझने में और उनकी व्याख्या करने में, कृषि, अनुसंधान एवं तकनीकी के क्षेत्र में विशेष सहायता करता है।

वर्तमान में विज्ञान शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है जैसा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986, संशोधित -1992 में विज्ञान-शिक्षण के संबंध में उल्लिखित है, ''विज्ञान शिक्षा को सुदृढ़ किया जाएगा ताकि बच्चों में जिज्ञासा की भावना, सृजनात्मकता, वस्तुगतता, प्रश्न करने का साहस और सौन्दर्यबोध जैसी योग्यताएँ व मूल्य विकसित हो सकें। विज्ञान शिक्षा के कार्यक्रमों को इस प्रकार बनाया जायेगा कि उनसे छात्रों में समस्याओं को सुलझाने और निर्णय करने की योग्यताएँ उत्पन्न हो सकें और वे स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग तथा जीवन के अन्य पहलुओं के साथ विज्ञान के सम्बन्ध को समझ सके।''
इस प्रकार विज्ञान शिक्षण से छात्रों में निम्नलिखित योग्यताओं का विकास किया जाता है

1. छात्रों में जिज्ञासा की भावना, सृजनात्मकता, वस्तुगतता व घटनाओं के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।
2. वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समस्याओं को सुलझाने और निर्णय करने की योग्यता का विकास करना।

3. छात्रों में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों, स्वास्थ्य, कृषि उद्योग आदि में विज्ञान के सम्बन्ध को समझने की योग्यता विकसित करना।

4.3 बच्चों की वैकल्पिक अवधारणाएँ और इसके शिक्षा शास्त्रीय निहितार्थ

औपचारिक विज्ञान शिक्षा के लिए शिक्षार्थी विभिन्न प्राकृतिक वस्तुओं तथा घटनाओं के विषय में वैकल्पिक अवधारणाओं के विभिन्न स्वरुपों के साथ प्रवेश करते हैं। औपचारिक विज्ञान शिक्षा में शिक्षार्थियों की वैकल्पिक अवधारणाएँ उनकी आयु, क्षमता, लिंग और सांस्कृतिक सीमाओं के आधार पर निर्धारित होती है। इस प्रकार यह देखा जाता है कि विभिन्न पृष्ठ भूमि के छात्रों में वैकल्पिक अवधारणाएं भिन्न होती हैं।

वैकल्पिक अवधारणाओं को शिक्षार्थियों के चिंतन के वैकल्पिक स्वरुप के रुप में समझा जाता है। प्रत्येक घटना के लिए शिक्षार्थी के पास किसी विशेष चिन्तन का स्वरुप होता है। जब नये अनुभव की पूर्व के अनुभवों के प्रकाश में व्याख्या की जाती है तथा वे नए अनुभव पहले की समझ पर विकसित होते हैं तो परिणाम स्वरुप वैकल्पिक अवधारणाएँ उत्पन्न होती हैं।

शिक्षा शास्त्रीय निहितार्थ –

1. विज्ञान के अध्ययन से छात्रों की वैकल्पिक अवधारणाएं शिक्षकों को अपने शिक्षार्थियों की मानसिक दुनिया को समझने और उसे कक्षा प्रक्रिया के लिए केन्द्रित करने में सहायक होती हैं।
2. पारंपरिक शिक्षण रणनीतियों के द्वारा वैकल्पिक अवधारणाओं को बदलना अत्यन्त कठिन होता है, क्योंकि इनकी प्रकृति दृढ़ व प्रतिरोधी होती है।
3. किसी एक विशिष्ट शिक्षण दृष्टिकोण का प्रयोग करके छात्रों की वैकल्पिक अवधारणाओं को आधार बनाते हुए उन्हें किसी नये वैज्ञानिक ज्ञान का स्पष्टीकरण प्रदान किया जा सकता है।
4. विशिष्ट शिक्षण में सर्वप्रथम शिक्षक को छात्रों की वैकल्पिक अवधारणाओं का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए तथा स्पष्टीकरण प्राप्त करते हुए नये ज्ञान के निर्माण की ओर अग्रसर होना चाहिए। तत्पश्चात मूल्यांकन व अनुप्रयोग से नये ज्ञान का सत्यापन किया जाना चाहिए।
5. छात्रों के अन्दर प्रश्न पूछने की क्षमता विकसित करनी चाहिए तथा जिज्ञासा का पोषण करना चाहिए।
6. छात्रों की वैकल्पिक अवधारणाओं, उनके व्यक्तिगत प्रत्यक्ष अवलोकन, अनुभवों, संस्कृति एवं भाषा तथा सामाजिक वातावरण से वैचारिक दृढ़ता से प्रभावित होती हैं। अत: इन्हें दूर करने हेतु व्यक्तिगत स्तर पर छात्रों की सहायता की जानी चाहिए।
7. वैकल्पिक अवधारणाओं का उपयोग नये ज्ञान के निर्माण में एक सहायक के रुप में किया जाना चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच
विज्ञान शिक्षण में छात्रों में विकसित वैकल्पिक अवधारणा के संप्रत्यय के विषय में बताते हुए उसके शिक्षा शास्त्रीय निहितार्थ स्पष्ट कीजिए।
....

4.4 विज्ञान सीखने सिखाने में प्रेक्षण-प्रयोग, खोज और अन्त: प्रज्ञा (सूक्ष्म) की भूमिका

विज्ञान के अध्ययन में खोज उपागम द्वारा नये ज्ञान का निर्माण किया जाता है। वास्तव में विज्ञान प्रयोगात्मक एवं प्रत्ययात्मक साधनों द्वारा निरीक्षण, अन्वेषण एवं संचय की निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया की विशेषता ज्ञान का संचय, सामान्यीकरण एवं सुधार करना है। विज्ञान एक प्रयोगात्मक विषय है, इस लिए इसमें प्रयोग करना, प्रयोगों का निरीक्षण करना तथा प्रयोगों के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकालना एक मुख्य शिक्षण उपागम के रूप में प्रयोग किया जाता है। विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य में छात्रों को वैज्ञानिक विधि का प्रशिक्षण देना सम्मिलित है। विज्ञान द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। विज्ञान सीखने सिखाने में प्रेक्षण, प्रयोग, खोज व अन्त: प्रज्ञा की विशेष भूमिका होती है। किसी भी घटना का वैज्ञानिक कार्य-कारण प्रभाव जानने के लिए घटना का कई बार प्रेक्षण किया जाता है तथा व्यक्ति अपनी क्षमता के आधार पर सम्बन्धित तत्व की व्याख्या करने में सक्षम होता है।

प्रेक्षण के आधार पर परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है तथा उन परिकल्पनाओं की सत्यता की जाँच प्रयोगों द्वारा की जाती है। प्रयोगों के सत्यापन के आधार पर परिकल्पना की पुष्टि की जाती है तथा नये नियमों व सिद्धान्तों की खोज की जाती है। वैज्ञानिक विधि की इस प्रक्रिया में अन्त: प्रज्ञा की विशेष भूमिका होती है। अन्त: प्रज्ञा किसी विषय पर समग्र व एकीकृत चिन्तन द्वारा वैज्ञानिक सम्प्रत्यय के निर्माण में सहायता प्रदान करती है। सूझ द्वारा ही व्यक्ति अन्वेषण की प्रक्रिया में अपूर्ण ज्ञान को पूर्णता की ओर अग्रसर करता है। इस प्रकार सामान्य से विशेष की ओर ज्ञान की प्राप्ति की जाती है।

अपनी प्रगति की जाँच
विज्ञान शिक्षण हेतु प्रेक्षण-प्रयोग, खोज और अन्त: प्रज्ञा द्वारा सीखना सिखाना छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास हेतु आवश्यक है, इस कथन की पुष्टि कीजिए।
....

4.5 शिक्षण शास्त्रीय युक्तियाँ

शिक्षण युक्तियाँ, वह सारी प्रविधियाँ हैं जिनका प्रयोग शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावपूर्ण, रुचिकर तथा स्पष्ट बनाने के लिए करता है। इनका उपयोग शिक्षक विषयवस्तु एवं कक्षा की परिस्थितियों व आवश्यकतानुसार करता है। शिक्षण युक्तियाँ छात्रों और शिक्षकों के मध्य अन्त:क्रिया को प्रभावशाली बनाती हैं। स्टोन्स तथा मैरिस के अनुसार, “शिक्षण युक्तियाँ उद्देश्यों से सम्बन्धित होती है और शिक्षक के व्यवहार को प्रभावित करती हैं। शिक्षक किसी परिस्थिति विशेष में कैसा व्यवहार करता है?, कैसे वह कक्षा में छात्रों के साथ विभिन्न भूमिकाओं में कार्य को पूरा करता है?, और कैसे छात्र, शिक्षक तथा पाठ्यवस्तु में अन्त: प्रक्रिया होती है? आदि बातें इसमें आती हैं। शिक्षण युक्तियाँ उद्देश्यों को प्राप्त करने का सबल माध्यम हैं तथा उद्देश्यों से सम्बन्धित रहने वाली सार्थक प्रविधियाँ हैं”।

4.5.1 शिक्षण विधि

विधि शब्द या पद में शिक्षण की प्रविधियां एवं युक्तियां दोनों ही सम्मिलित होती हैं तथा इसमें क्या पढाना है? का विकल्प भी निहित होता है। विधि शब्द की उत्पति लैटिन भाषा से हुई है, जिसका अर्थ है ’तरीका’ अथवा ’रास्ता या मार्ग’। इस प्रकार विधि से आशय ’वैज्ञानिक ज्ञान तथा कुशलताओं को एक अध्यापक द्वारा अपने विद्यार्थियों तक पहुँचाने और हस्तान्तरित करने के मार्ग अथवा तरीके से है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि – शिक्षण विधि से आशय ‘क्या पढाना है’ और विज्ञान को ‘कैसे पढाना’ है। अत: ज्ञान के संसार की छात्रों के मस्तिष्क में व्याख्या करने की प्रक्रिया ही विधि कहलाती है। यह विज्ञान पढाने या सिखाने का रास्ता है। शिक्षण विधि शिक्षण का व्यापक स्वरूप निश्चित करती है। शिक्षण - विधि वह प्रक्रिया है, जिसकी सहायता से किसी वांछित लक्ष्य अथवा उद्देश्य की प्राप्ति होती है। इसके अन्तर्गत शिक्षक विषय-वस्तु को एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करते हुए विभिन्न क्रियाएँ करता है तथा अपने लक्ष्य या उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है। परन्तु अध्यापक को यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि, विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने लिए विधि का प्रयोग एक साधन के रूप में करना चाहिए न कि साध्य के रूप में। विज्ञान अध्यापक अपनी रूचियों, योग्यताओं, क्षमताओं और अनुभवों के अनुसार विभिन्न शिक्षण-विधियों का प्रयोग करने के लिए स्वतन्त्र होता है। किसी विधि का चयन करते समय शिक्षक को विचार कर लेना चाहिए कि क्या पढाना है ? क्यों पढाना है? किसे पढाना है ? कैसे पढाना है ? अर्थात शिक्षण की विभिन्न विधियां कौन-कौन सी हैं? विधियों के प्रयोग करने में क्या समस्याएं हैं? इन समस्याओं को कैसे दूर किया जा सकता है? कौन-सी विधि सर्वोतम होगी ?

अपनी प्रगति की जाँच
“शिक्षण विधि किसी भी विषय के शिक्षण का व्यापक स्वरुप निर्धारित करते हुए शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है ” इस कथन की समीक्षा कीजिए।
....

विज्ञान शिक्षण की प्रमुख विधियां

आज के मनोवैज्ञानिक युग में बालक को ही शिक्षा का केंद्र-बिंदु माना जाता है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य बालक के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन करना है। यह तभी सम्भव है जब शिक्षण प्रभावशाली हो। शिक्षण विधि को शिक्षक के द्वारा शिक्षण के समय अपनाये जाने वाले व्यवहार के रूप में भी समझ सकते हैं।

शिक्षण विधि की परिभाषाएँ

1. “शिक्षण-विधि शिक्षक द्वारा संचालित वह प्रक्रिया है जिससे विद्यार्थियों को ज्ञान की प्राप्ति होती है।”
2. जॉन डी. वी. के अनुसार- “शिक्षण पध्दति वह तरीका है जिसके द्वारा हम पठन सामग्री को व्यवस्थित करके, निष्कर्षों को प्राप्त करते है।”

प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण की कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं:

(1) व्याख्यान विधि (lecture Method)
(2) अवलोकन विधि (Observation Method)
(3) प्रदर्शन विधि (Demonstration Method)

(4) अनुसंधान विधि (Heuristic Method)
(5) प्रायोजना विधि (Project Method)
(6) प्रयोगशाला विधि (laboratory Method)
(7) पर्यटन विधि (Field Trip Method)
(8) जिज्ञासा उपागम या समस्या समाधान विधि (Curiosity Approach or Problem Solving Method)
(9) खेल विधि (Play Way Method)
(10) मॉडल निर्माण विधि (Model Construction Method)
(11) अभिक्रमिक अनुदेशन (Programmed Teaching)

1. व्याख्यान विधि

व्याख्यान के द्वारा शिक्षक छात्रों के समक्ष विषय-वस्तु से सम्बंधित तथ्यों, सिध्दांतों, नियमों, प्रक्रियाओं आदि को मौखिक रूप से स्पष्ट करता है। विज्ञान-शिक्षण में व्याख्यान विधि का प्रयोग प्राचीन काल से चला आ रहा है। प्राचीन समय में संसाधनों के अभाव के कारण शिक्षक व्याख्यान द्वारा ही विद्यार्थियों को ज्ञान दे सकता था। जब से मनोवैज्ञानिकों ने 'बालक को केंद्र मानकर पढ़ाना चाहिए' की ओर ध्यान आकर्षित किया है तब से व्याख्यान विधि को उतना महत्त्व नही दिया जाने लगा है।

व्याख्यान विधि के गुण-

1) व्याख्यान विधि से विषय-वस्तु को संगठित रूप से तथा एक निश्चित क्रम से पढ़ाया जा सकता है।
2) कम समय में छात्रों को अधिक से अधिक ज्ञान दिया जा सकता है।
3) किसी पाठ की प्रस्तावना के समय अथवा पढ़ाई गयी विषय-वस्तु के दोहराव के लिए इस विधि का प्रयोग उपयोगी सिध्द होता है।
4) यह विधि वैज्ञानिकों की जीवनी एवं विज्ञान से सम्बंधित ऐतिहासिक घटनाओं के शिक्षण हेतु भी उपयुक्त है।
5) यह विधि शिक्षक के लिए भी बहुत सरल है। पाठ की तैयारी हेतु उसे बहुत अधिक प्रयत्न नही करने होते हैं।

व्याख्यान विधि के दोष

1) जिस समय अध्यापक व्याख्यान देता है तब विद्यार्थी निष्क्रिय रूप से बैठे रहते है और अध्यापक सक्रिय रहता है।उन्हें स्वयं तर्क करने तथा चिंतन करने का अवसर नही मिलता।
2) इस विधि के प्रयोग से अध्यापक विद्यार्थियों की कठिनाई का निदान भी नहीं कर सकता। वह समझता है कि सभी विद्यार्थी पाठ को समझ रहे हैं जबकि वास्तव में अनेक विद्यार्थी उसे नहीं समझ पाते हैं।
3) इस विधि के द्वारा शिक्षक बालकों में वैज्ञानिक अभिवृति विकसित करने में भी असमर्थ रहता है जो कि विज्ञान शिक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य है।
4) इस विधि के द्वारा वालकों को वैज्ञानिक विधि में प्रशिक्षित करना भी सम्भव नहीं है।
5) यह विधि शिक्षण के 'करके सीखने के सिध्दांत' के विपरीत है।

(2) अवलोकन विधि

इसे निरीक्षण विधि भी कहते हैं। अवलोकन विधि में बालक देखकर ज्ञान प्राप्त करता है। ऐसा ज्ञान स्थाई होता है। इस विधि के अन्तर्गत बालक तथ्यों तथा घटनाओं का अवलोकन करते है।

अवलोकन विधि के गुण

1) अवलोकन विधि से शिक्षार्थियों को प्राप्त नवीन ज्ञान से सीधा एवं प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित होता है।
2) इस विधि में विद्यार्थियों में अभिरुचि पैदा की जा सकती है, जिससे उनकी निष्क्रियता को अधिक सक्रिय बनाने में योगदान देती है।
3) यह पद्दति बालक की नैसर्गिक उत्सुकता एवं प्रबल जिज्ञासा को प्रोत्साहन और संतुष्टि प्रदान करती है।
4) इस पद्दति के अन्तर्गत बालक प्रत्येक वस्तु को प्रत्यक्ष रूप में देखता है जिससे वस्तु के प्रति सही धारणा विकसित होती है।
5) विद्यार्थी अमूर्त विचारों और बिन्दुओं को समझने में सफल होता है क्योंकि उन्हें मूर्त एवं ठोस अनुभवों द्वारा इनको स्पष्ट किया जाता है। अवलोकन विधि से इस प्रक्रिया को स्पष्ट किया जा सकता है।
6) अध्यापक प्रत्येक सोपान की व्यवस्था करता रहता है और सभी छात्र प्रक्रिया को विशिष्ट दृष्टि से देखते है और अर्थ ग्रहण करते है।

अवलोकन विधि के दोष

1) कभी-कभी अधिक प्रदर्शन एक साथ होने से बालक उन्हें समझने में समर्थ नही हो पाते हैं।
2) कक्षा के समस्त विद्यार्थी अपने हाथों से प्रयोग नहीं करते है अतः उन्हें सीधा अनुभव प्राप्त नहीं हो पाता हैं।
3) यह पद्दति केवल छोटी कक्षाओं में ही सीमित रूप में प्रयोग की जा सकती हैं।
4) समस्त पाठ्यक्रम का ज्ञान निरीक्षण के आधार पर नहीं कराया जा सकता हैं।
5) कक्षा में कुछ छात्र निष्क्रिय रहते हैं।

(3) प्रदर्शन विधि

विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में प्रदर्शन विधि का काफी महत्व है। इस विधि में छात्र एवं शिक्षक दोनों ही सक्रिय रहते हैं। कक्षा में शिक्षक सैद्धान्तिक भाग का विवेचन करने के साथ इस विधि द्वारा उसका सत्यापन करता है। शिक्षक पढाते समय प्रयोग करता जाता है और छात्र प्रयोग –प्रदर्शन का निरीक्षण करते हुए ज्ञान प्राप्त करते हैं। विज्ञान शिक्षण के लिए प्रदर्शन विधि अत्यंत महत्वपूर्ण व लाभदायक विधि है। इससे छात्रों में कठिन संप्रत्ययों को बोधगम्य बनाकर सरलता से विज्ञान के विभिन्न सम्प्रत्ययों को अध्यापक प्रदर्शन कराते हुए समझा सकता है। जॉनसन के मतानुसार "छोटी कक्षाओं में सामान्य विज्ञान के लिए प्रदर्शन विधि प्रयोगशाला विधि से अधिक मूल्यवान है तथा कम खर्चीली है।" इस विधि में अध्यापक विषय पढ़ाने के साथ साथ उससे सम्बंधित प्रयोग भी स्वयं करके बच्चों को दिखाता है। प्रदर्शन विधि में बालक की सभी ज्ञानेन्द्रियाँ व्यस्त रहती हैं। इस विधि में शिक्षक एवं छात्र दोनों सक्रिय रहते है।

प्रदर्शन विधि की प्रक्रिया –

इस विधि में कक्षा-शिक्षण के समय शिक्षक अपनी मेज पर विषयवस्तु से सम्बन्धित उपकरणों को व्यवस्थित कर रखता है। शिक्षक पाठ्य विषय पढाता जाता है तथा आवश्यक प्रयोग करके दिखाता है। विद्यार्थी प्रयोग को देखते हैं तथा निरीक्षण के द्वारा प्राप्त ज्ञान की पुष्टि करते हैं। इस प्रकार प्रदर्शन द्वारा शिक्षक अपने पाठ्य विषयों को भली-भाँति स्पष्ट कर देता है।

विज्ञान अध्यापक से अपेक्षा की जाती है कि उसे कक्षा मे किए जाने वाले प्रयोग या प्रदर्शन की तैयारी तथा उसकी योजना विधिवत ढंग से कर लेनी चाहिए। अध्यापक को यह भी निश्चित कर लेना चाहिए कि कक्षा में कौन

-कौन गतिविधियाँ किस क्रम मे करनी हैं , जिससे प्रयोग प्रदर्शन के समय किसी परेशानी का सामना न करना पडें। अध्यापक को यह भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि प्रयोग अथवा प्रदर्शन को गतिशील बनाए रखने के लिए छात्रों से किस प्रकार के प्रश्न पूछने हैं? तथा प्रयोग - प्रदर्शन में उनका अधिक से अधिक सहयोग किस प्रकार से लिया जा सकता है? प्रयोग से सम्बन्धित आवश्यक उपकरणो एवं सामग्री की उचित व्यवस्था करनी चाहिए तथा उनकी जॉच करना चाहिए कि वे प्रयोग में लाने की स्थिति में है अथवा नही।

प्रदर्शन विधि की विशेषताएँ –

1. इस विधि से छात्र, नियमों/ सिद्धान्तों को स्पष्ट रुप से समझ सकते हैं, तथा प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।
2. इस विधि से कठिन तथा सूक्ष्म विचारों को छात्रों के सम्मुख सरल रुप में प्रस्तुत किया जा सकता है।
3. सभी छात्रों के लिए प्रयोगशाला उपकरणों की अनुपलब्धता में यह विधि प्रभावशाली शिक्षण हेतु सहायक है।
4. शिक्षक द्वारा प्रयोग करने पर समय एवं धन का व्यय कम होता है।
5. छात्रों की दृष्टि एवं श्रवण इन्द्रियाँ सक्रिय रहती है तथा निरीक्षण व तर्क शक्ति का विकास होता है।

प्रदर्शन विधि की सीमाएँ –

1. इस विधि में छात्रों को स्वयं प्रयोग करने के अवसर प्राप्त नहीं होते हैं।
2. कभी-कभी शिक्षक द्वारा प्रयोग सफल नहीं होता तो छात्रों के मन में विषय के प्रति अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न हो जाती है।
3. इस विधि में छात्रों की अपेक्षा अध्यापक अधिक क्रियाशील रहता है।
4. यह आवश्यक नही कि छात्र प्रयोग के समस्त भाग को ध्यान से देखते रहें।
5. छात्रों की व्यक्तिगत कठिनाइयों का निराकरण सम्भव नही होता है।

प्रदर्शन विधि के गुण

1. अधिगम प्रेरित वातावरण- इस विधि में छात्र व्याख्यान विधि की तरह निष्क्रिय श्रोता की भांति नही रहते है। इसमे छात्र एवं अध्यापक दोनों का सक्रिय योगदान रहता है।
2. स्पष्ट और स्थायी ज्ञान- इस विधि के द्वारा छात्रों को स्पष्ट और स्थायी ज्ञान प्राप्त होता है, क्योंकि छात्र प्रत्येक वस्तु की रचना, कार्य-प्रणाली आदि को प्रत्यक्ष रूप में देखते हैं।
3. मानसिक विकास में सहायता- इससे छात्रों की तर्क, निरीक्षण तथा विचार जैसी मानसिक शक्तियों का विकास होता है।
4. अध्यापक के कार्य में सहायता- जिस विषय में व्याख्यान विधि द्वारा नही पढ़ाया जा सकता, प्रदर्शन द्वारा ही अध्यापक कम समय में अच्छी तरह पढ़ा सकता है।
5. बचत का साधन- इस विधि में अधिक साधनों की आवश्यकता भी नही होती है।

प्रदर्शन विधि के दोष

1. प्रदर्शन करते समय विधार्थी निष्क्रिय बैठे रहते है।
2. इसमें बालक की मौलिकता का विकास नहीं होता है।
3. प्रयोगशाला विधि की भांति इस विधि में छात्रों को स्वयं प्रयोग करने, उपकरणों का उपयोग लाने तथा सामान्यीकरण का अवसर नहीं मिल पाता हैं।

4. यदि कक्षा में छात्रों की संख्या अधिक है तो यह विधि अधिक उपयोगी सिध्द नहीं हो पाती है।

अपनी प्रगति की जाँच
प्रदर्शन विधि के सोपान लिखिए तथा इस विधि द्वारा अध्ययन किये जा सकने वाले दो प्रकरण लिखिए।
....

(4) अनुसंधान विधि

विज्ञान की सबसे अधिक प्रभावशाली और मनोवैज्ञानिक प्रणाली अनुसन्धान विधि है। अनुसन्धान विधि के आविष्कारक एच. ई. आर्मस्ट्रांग थे। इस प्रणाली का मुख्य आधार हर्बर्ट स्पेन्सर का यह कथन है कि- "बालकों को जितना सम्भव हो, बताया जाय और उनको जितना अधिक सम्भव हो, खोजने को प्रोत्साहित किया जाय।" यह विधि विज्ञान शिक्षण के लिए विशेष रूप से लाभदायक सिध्द होती है। आर्मस्ट्रांग ने इस विधि की परिभाषा इस प्रकार से दी है- "Heuristic Method of teaching are methods which involve placing our students as far as possible, in the attitude of discoverer." (अन्वेषण प्रणाली वह है जो छात्रों को यथासम्भव एक अन्वेषण की स्थिति में ला देती है, जिनमें केवल वस्तुओं के विषय में कहे जाने के बजाय उनकी खोज को आवश्यक माना गया है)

अंग्रेजी के शब्द 'Heuristic' का जन्म ग्रीक शब्द'Heurisco' से हुआ है। Heurisco का अर्थ है-"मैं खोजता हूँ "इस प्रणाली का मुख्य उद्देश्य बालकों में खोज की प्रवृति का उदय करना है।

अनुसन्धान विधि के गुण

1) अनुसन्धान विधि से छात्रों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक बन जाता है तथा उनमें निरीक्षण और जिज्ञासा की भावना विकसित होती है।
2) इस प्रणाली के प्रयोग से अध्यापक सम्पूर्ण कक्षा के सम्पर्क में आता है। यह प्रत्येक छात्र के व्यक्तिगत कार्य की देखभाल करता है।
3) इस विधि को अपनाने से बालक में आत्मनिर्भरता की भावना विकसित होती है।
4) यह प्रणाली बालकों को पर्याप्त क्रियाशील रहने का अवसर देती है।
5) यह प्रणाली पूर्णतया मनोवैज्ञानिक है। यह विधि विषयों को बोधगम्य तथा सरल बना देती है।

अनुसन्धान विधि के दोष

1) यह प्रणाली व्ययपूर्ण है।
2) यह प्रणाली प्राथमिक कक्षा के छात्रों के लिए पूर्णतया व्यर्थ है। इस प्रणाली का प्रयोग केवल उच्च कक्षाओं में ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है।
3) तथ्यों को खोजने के लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता होती है।
4) विशेष ढंग से प्रशिक्षित किये अध्यापक ही अनुसन्धान विधि का प्रयोग कर सकते हैं।
5) यह प्रणाली केवल उन विद्यालयों में ही प्रयोग की जा सकती है जहाँ छात्रों की संख्या कम होती है।

(5) प्रयोजना विधि या परियोजना विधि

प्रयोजना विधि को अंग्रेजी में 'Project Method' कहते है। यह विज्ञान शिक्षण की एक महत्वपूर्ण पध्दति है। इस पध्दति के जन्मदाता डब्ल्यू. एच. किलपैट्रिक (W. H. Kilpatrick) थे। ये डीवी (Dewey) के शिष्य थे और उन्होंने डीवी के प्रयोजनवाद (Pragmatism) के सिध्दांत के आधार पर ही प्रायोजना पध्दति को जन्म दिया। किलपैट्रिक महोदय का कहना है कि प्रायोजना वह सहृदय उद्देश्यपूर्ण कार्य है जिसे लगन के साथ सामाजिक वातावरण में दिया जाता है। उन्होंने कहां है कि जब कोई व्यक्ति किसी निश्चित क्रम में कोई कार्य करना आरम्भ करता है और स्वयं यह समझ पाता है कि वह क्या करने जा रहा है तो हम कहते है कि वह किसी परियोजना की पूर्ति के लिए कार्य कर रहा है। परियोजना ही व्यक्ति के चिंतन को संगठित करती है। किलपैट्रिक महोदय के शब्दों में- "Whenever an individual starts off on a certainline and sees himself what he is going to do, he is working on a project."

'प्रायोजना पध्दति' का जन्म इसलिये हुआ ताकि विद्यार्थियों को वास्तविक शिक्षा मिल सके, वे सक्रिय होकर विषय ज्ञान प्राप्त कर सके, उन्हें चिंतन तथा तर्क करने का अवसर मिल सके, उनका पाठ्यक्रम, उनकी रुचियों, अभिरुचियों तथा आवश्यकताओं पर निर्धारित हो सके तथा उन्हें सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर शिक्षा दी जा सके। इस पध्दति में बालक की क्रियाशीलता को प्रधानता दी जाती है। इसलिय कहा जाता है- 'Project indicates purposeful activity'. इस पध्दति के अनुसार कार्य करने में बालक रूचि लेता है और अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण रूप से समझता है।

(6) प्रयोगशाला विधि (laboratory Method)

विज्ञान की वास्तविक शिक्षा प्रयोगशालाओं में ही संभव है। इसलिए आधुनिक शिक्षा प्रणाली में प्रत्येक विद्यालय में विज्ञान कक्षाओं के लिए प्रयोगशाला अनिवार्य है। विद्यार्थी प्रयोगशाला में स्वाभाविक परिस्थितियों के बीच प्रयोग करते है। वे प्रयोग सम्बन्धी गणनाओं को अपनी उत्तर पुस्तिकाओं पर रिकॉर्ड करते है।यदि प्रयोग करते समय कोई शंका पैदा होती है तो शिक्षक, तुरंत उसका समाधान करता है। इस विधि के माध्यम से शिक्षक व्यक्तिगत शिक्षण एवं सामूहिक शिक्षण में समन्वय स्थापित करके छात्रों में विज्ञान के अध्ययन के प्रति विशेष रुचि एवं क्रियाशीलता उत्पन्न करता है। शिक्षा शब्दकोश में प्रयोगशाला विधि के विषय में लिखा गया है, ''प्रयोगशाला विधि वह अनुदेशनात्मक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा किसी घटना के कारण प्रभाव, प्रकृति अथवा गुण चाहे सामाजिक, मनोवैज्ञानिक अथवा भौतिक हों, वे वास्तविक अनुभव अथवा प्रयोग द्वारा नियंत्रित दशाओं में सुनिश्चित किये जाते हैं।'' इस विधि में छात्र स्वयं कार्य करने में रुचि लेते हैं, इसलिए मनोवैज्ञानिक ढंग से यह विधि उचित है।

इस विधि में छात्र प्रयोगशाला में जाकर स्वयं प्रयोग करते है और प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा ज्ञान प्राप्त करते है।वे स्वयं प्रेक्षण,निरीक्षण एवं गणना द्वारा परिणाम निकालते हैं तथा किसी नियम अथवा सिद्धान्त को स्वयं अपने शब्दों में प्रतिपादित करते हैं। शिक्षक समय-समय पर छात्रों के कार्यो का निरीक्षण करता है और आवश्यकतानुसार छात्रों को निर्देष देकर मार्ग- प्रदर्शन करता है। इसलिए प्रयोगशाला विधि में छात्रों के साथ - साथ अध्यापक को भी सक्रिय रहना पड़ता है। विद्यार्थी स्वयं सक्रिय रहकर किसी निष्कर्ष पर पहुचते हैं। जिससे उनमें अन्वेष्णात्मक शक्तियों का विकास होता है। यह विधि अन्य विधियों की अपेक्षा उपयोगी, व्यावहारिक तथा वैज्ञानिक है। प्रयोगशाला विधि में प्रयोग को सफल एवं प्रभावी बनाना शिक्षक की स्वयं की योग्यता, क्षमता,

अनुभव तथा सूझ-बूझ पर निर्भर करता है। सामान्यत: प्रयोगशाला विधि द्वारा शिक्षण-अधिगम करने पर निम्नलिखित पदों का अनुसरण करके किए गए प्रयोग को प्रयोगात्मक नोट बुक में आलेखित किया जाता है:

प्रयोगशाला विधि की प्रक्रिया –

इस विधि में शिक्षक सर्वप्रथम छात्रों को सूत्रों, नियमों, सिद्धान्तों एवं तथ्यों का ज्ञान कराता है। इसके बाद उन्हें प्रयोग करके सिद्ध करने की विधि स्पष्ट करता है। तत्पश्चात छात्रों को प्रयोग करने के निर्देश दिये जाते हैं तथा प्रयोग करने में शिक्षक छात्रों को सहायता प्रदान करते हैं। अन्त में छात्र प्रयोग के माध्यम से प्राप्त निष्कर्षों से सूत्र/नियम / सिद्धान्त/ तथ्यों का सत्यापन करते हैं।

प्रयोगशाला विधि के गुण –

1. इस विधि में छात्रों को स्वयं करके सीखने का अवसर प्राप्त होता है अत: ज्ञान स्थायी होता है।
2. इस विधि में प्रत्येक छात्र अपनी क्षमता के अनुसार सीखता है।
3. उपकरणों का प्रयोग करने से उनमें प्रायोगिक कौशल का विकास होता है।
4. छात्रों को तथ्यों एवं सिद्धान्तों का सत्यापन करने का अवसर प्राप्त होता है।
5. छात्र परीक्षण तथा निरीक्षण द्वारा ज्ञार्नाजन करते हैं जिससे उनमें वैज्ञानिक दृष्टि कोण तथा निरीक्षण शक्ति का विकास होता है।

प्रयोगशाला विधि के दोष –

1. इस विधि द्वारा निम्न कक्षाओं में शिक्षण नही किया जा सकता है क्योंकि कम आयु के छात्र नियमों का सत्यापन नही कर सकते हैं।
2. समय एवं आर्थिक दृष्टि से यह विधि उपयुक्त नही है क्योंकि इसमें समय तथा धन अधिक व्यय होता है।
3. इस विधि का प्रयोग सीमित छात्रों की कक्षा में ही किया जा सकता है।
4. इस विधि का प्रयोग विज्ञान के शिक्षण में केवल कुछ प्रकरणों में ही किया जा सकता है।
5. इस विधि के प्रयोग में सभी शिक्षक रुचि नहीं लेते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच
प्रयोगशाला विधि विज्ञान शिक्षण हेतु एक प्रभावी विधि है , स्पष्ट कीजिये।
....

(7) समस्या समाधान विधि

विज्ञान शिक्षण में समस्या समाधान विधि का विशेष महत्व है। इसमें शिक्षक किसी समस्या को समाधान हेतु छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करता है। छात्र उसके समाधान हेतु नियोजित प्रयास करते हैं तथा अर्थपूर्ण हल खोजते हैं। इस प्रकार समस्या समाधान विधि एक विवेचनात्मक चिन्तन प्रक्रिया से विवेकपूर्ण समाधान खोजने की विधि है।

समस्या समाधान विधि के अन्तर्गत बालक समस्या के समाधान के लिए सुनियोजित तरीके से समस्या का निष्कर्ष प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रयत्न करता है। समस्या समाधान के अन्तर्गत विभिन्न तरीकों से समस्या पर विचार करने हेतु वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। समस्या समाधान से शिक्षण के अन्तर्गत शैक्षिक दृष्टि

से उपयोगी समस्याओं का ही चुनाव किया जाता है तथा छात्र एवं अध्यापक मिलकर वैज्ञानिक तरीके से समस्या का समाधान करने का प्रयास करते है। समस्या समाधान पद्धति के द्वारा शिक्षण करने का यह उद्देश्य होता है कि छात्रों में समस्या समाधान की योग्यताओं का विकास हो ताकि भावी जीवन में छात्र आने वाली समस्याओं से भयभीत होकर पलायन न करे, समस्याओं का अवैज्ञानिक तरीके से समाधान न निकालें, अपितु समस्याओं का नियोजित तरीके तथा वैज्ञानिक विधि से समाधान ढूंढें। यह पद्धति इस मनोवैज्ञानिक मान्यता पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर समस्याओं को अपने तरीके से समाधान की योग्यता, तर्क देने की क्षमता होती है, मात्र आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्ति के अन्दर समस्या का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हल खोजने की क्षमता का विकास किया जाए। अतः समस्या समाधान पद्धति की मुख्य विशेषता मानसिक क्रियाएँ एवं चिन्तन है।

डीवी के अनुसार इस प्रकार के चिन्तन को विवेचनात्मक चिन्तन कहते है। विवेचनात्मक चिन्तन की दो अवस्थाएं है - एक ऐसी स्थिति जब संशय, अवरोध, दुविधा या मानसिक कठिनाई, जिसमें चिन्तन का प्रारम्भ होता है। द्वितीय अवस्था में व्यक्ति शोध जाँच, तलाश एवं पूछताछ का कार्य करता है, और ऐसी सामग्री जुटाता है जब संशय, अवरोध और दुविधा का समाधान होता है।

समस्या –समाधान विधि की प्रक्रिया –

इस विधि के निम्नांकित सोपान हैं-

(1) समस्या का चयन

(2) समस्या की प्रस्तुति

(3) तथ्यों का एकत्रीकरण

(4) परिकल्पना का निर्माण

(5) समाधानात्मक निष्कर्ष पर पहुँचना

(6) मूल्यांकन

(7) कार्य का आलेखन

समस्या-समाधान विधि की विशेषताएँ-

(1) छात्र समस्याओं का स्वत: हल करना सीखते हैं।

(2) उनमें निरीक्षण एवं तर्क शक्ति का विकास होता है।

(3) वे समान्यीकरण करने में समर्थ होते हैं।

(4) इससे छात्रों की मानसिक शक्तियों का विकास होता है।

(5) इस विधि से प्राप्त ज्ञान तार्किक क्रम में, सुव्यवस्थित व स्थायी होता है।

समस्या–समाधान विधि की सीमाएँ-

(1) समय एवं शक्ति का अपव्यय होता है।

(2) यह विधि निम्न कक्षाओं के छात्रों हेतु उपयोगी नहीं है।

(3) इस विधि के प्रयोग के लिए योग्य शिक्षकों की आवश्यकता होती है।

(4) इस विधि से शिक्षण करते हुए निर्धारित पाठ्यक्रम पूर्ण कर पाना सम्भव नहीं है।

अपनी प्रगति की जाँच
समस्या समधान विधि के गुण व दोषों का उल्लेख कीजिए।
....

(8) खोजविधि

इस विधि को अन्वेषण विधि या हयूरिस्टिक (Heuristic) विधि के नाम से भी जाना जाता है। इस विधि में छात्र स्वयं खोज करके सीखते हैं। शिक्षक का कार्य केवल पथ प्रदर्शक का होता है। छात्र जैसे-जैसे कार्य तथा प्रयोग करते जाते हैं, उन्हें नवीन ज्ञान की प्राप्ति होती जाती है। इस विधि के जन्मदाता प्रो. हेनरी एडवर्ड आर्मस्ट्राँग थे। उनके मतानुसार, "किसी भी विषय को सीखने की प्रक्रिया ही अन्वेषण है और छात्रों को विषय सम्बन्धी तथ्यों एवं सिद्धान्तों की खोज स्वयं करनी चाहिए।" इस विधि में छात्र एक अन्वेषणकर्ता के रुप में कार्य करता है।

खोज विधि के पद -

(1) समस्या की प्रस्तुति

(2) तथ्यों की खोज

(3) परिकल्पनाओं का निर्माण

(4) परिकल्पनाओं का परीक्षण

(5) नियम/निष्कर्ष निकालना

खोज विधि के गुण –

(1) यह विधि क्रियाशीलता के सिद्धान्त पर आधारित है तथा छात्र स्वयं क्रिया करके खोजते हैं।

(2) यह विधि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करती है।

(3) इस विधि में छात्र किसी नियम/सिद्धान्त की खोज अथवा किसी समस्या का हल स्वयं खोजते हैं, इससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।

(4) इससे छात्रों की निरीक्षण शक्ति तीव्र होती है तथा विचार प्रक्रिया सक्रिय हो जाती है।

खोज विधि के दोष-

(1) यह विधि समय की दृष्टि से उपयोगी नही है क्योंकि छात्र खोज में अधिक समय व शक्ति व्यय करते हैं।

(2) विज्ञान की सभी शिक्षण विषयवस्तु का शिक्षण इस विधि से संभव नहीं होता है।

(3) इस विधि में गलत निष्कर्ष निकाले जाने की संभावना सदैव बनी रहती है।

(4) छात्रों के बडे समूह को इस विधि से सिखाना कठिन है।

(5) इस विधि के प्रयोग हेतु एक अच्छी प्रयोगशाला व पुस्तकालय आवश्यक है।

अपनी प्रगति की जाँच
खोज विधि से अधिगमकर्ता में किन गुणों का विकास किया जा सकता हैं?
....

(9) सामूहिक गतिविधियाँ

विज्ञान शिक्षण हेतु सामूहिक गतिविधियाँ सम्पूर्ण कक्षा को समान स्तर पर ज्ञान प्रदान करने में सहायक होती है। इससे अध्यापक को पूरी कक्षा को कार्य में सम्मिलित करने के अवसर प्राप्त होते हैं सामूहिक गतिविधियाँ विद्यार्थी केन्द्रित होती हैं जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी अपनी क्षमता व योग्यता के आधार पर समूह में कार्य करते हुए सीखता है।

विज्ञान के शिक्षण में विभिन्न प्रकार की सामूहिक गतिविधियाँ प्रयोग की जाती हैं-

(1) प्रायोजना विधि

(2) अन्वेषण विधि

(3) क्षेत्र अध्ययन

(4) पर्यटन विधि

(5) प्रयोगशाला विधि

(6) सामूहिक अध्ययन विधि

सामूहिक गतिविधियों के लाभ-

(1) इनके प्रयोग से छात्रों के मध्य परस्पर सहयोग से कार्य करने की क्षमता का विकास होता है।

(2) छात्रों में आत्मविश्वास, नेतृत्व शक्ति तथा उत्तरदायित्व की भावना का विकास किया जाता है।

(3) अधिक छात्रों की संख्या होने पर उन्हें समूहों में बाँटकर प्रभावी शिक्षण में सहायता प्राप्त होती है।

अपनी प्रगति की जाँच
भारतीय परिस्थितियों में विज्ञान शिक्षण की कौन सी विधि सर्वश्रेष्ठ है और क्यों ?
....

(10) क्षेत्र अध्ययन

विज्ञान शिक्षण में क्षेत्र अध्ययन, शिक्षण हेतु वास्तविक वातावरण तथा अनुभव प्रदान करने वाली विधि है। क्षेत्र अध्ययन की प्रक्रिया में किसी विषय से सम्बन्धित सूचना को वास्तविक रुप में कक्षा, प्रयोगशाला तथा पुस्तकालय से बाहर उसके वास्तविक परिवेश में प्राप्त किया जाता है। क्षेत्र अध्ययन की प्रक्रिया में किसी घटना अथवा प्रक्रिया का वास्तविक अवलोकन किया जाता है तथा अध्ययन रिपोर्ट का निर्माण किया जाता है। इस अध्ययन विधि की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि किस सीमा तक घटना का वास्तविक रुप में अवलोकन सम्भव होता है।

विज्ञान शिक्षण में क्षेत्र अध्ययन –

(1) वास्तविक परिवेश में विभिन्न वैज्ञानिक घटनाओं का अध्ययन करना।

(2) स्थानीय विज्ञान संग्रहालय, नक्षत्रशाला आदि का अध्ययन करना।

(3) जल शोधन संयन्त्र की कार्यप्रणाली का अध्ययन करना।

(4) किसी क्षेत्र विशेष के प्रमुख कारखाने का निरीक्षण करना ।

(5) जल, मृदा, वायु में प्रदूषण का स्तर व कारक घटकों का अध्ययन करना।

(11) अवलोकन (निरीक्षण प्रविधि)

विज्ञान के अध्ययन में कार्य-कारण या पारस्परिक सम्बन्धों को जानने हेतु घटनाओं को ठीक उसी रुप में देखना तथा उनको लिखना, अवलोकन कहलाता है। पी. वी. यंग के अनुसार "अवलोकन को विचारपूर्वक अध्ययन की पद्धति के रुप में काम में लाया जाता है, जिससे समग्रता का निर्माण करने वाली अलग इकाइयों का अध्ययन किया जा सके।" अवलोकन विधि एक उपयोगी विधि है इस विधि के द्वारा किसी घटना एवं व्यक्ति का अत्यन्त सूक्ष्म रुप से अध्ययन किया जा सकता है। अवलोकन की प्रक्रिया वैज्ञानिक विधि के विकास में प्रथम चरण में आती है। अवलोकन द्वारा किसी घटना के विषय में व्यक्ति विशेष उसकी व्याख्या करता है। निरन्तर अवलोकन के द्वारा किसी घटना विशेष के लिए परिकल्पना का निर्माण किया जाता है जिसका परीक्षण प्रयोगों द्वारा करते हैं। अन्त में प्रयोगों के सत्यापन से नये कार्य –कारण सम्बन्ध, नियम व सिद्धान्तों का निर्माण व व्याख्या की जाती है। विज्ञान शिक्षण में अवलोकन छात्रों को वास्तविक अधिगम अनुभव प्रदान करने में सहायक होता है तथा वह प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करते हैं।

(12) वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम

वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम एक ऐसी प्रणाली है जिससे छात्रों की योग्यता, रुचि और आवश्यकता के अनुरुप अनुदेशन प्रदान करते हुए अनुदेशन के वैयक्तीकरण पर अत्यधिक बल दिया जाता है।

नैपर (1980) के अनुसार –'' वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली मूलत: स्वगतियुक्त निपुणता-अधिगम (Masterylearning) है जिसमें छात्र पाठ्यक्रम सामग्री की एक विशिष्ट प्रारुप में तैयार की गयी यूनिट पर स्वयं कार्य करते हैं। प्रत्येक यूनिट में उद्देश्यों, वाचन, दत्तकार्यो और सम्बन्धित समस्याओं की सूची होती है। जब छात्र महसूस करता है कि उसने उस विषय-वस्तु विशेष में निपुणता स्तर प्राप्त कर लिया है तो उसका परीक्षण होता है और सफलता प्राप्त होने पर अगली यूनिट उसे अधिगम हेतु दे दी जाती है। जब तक पिछली यूनिट में वह निपुणता स्तर प्राप्त नहीं करेगा, तब तक अगली यूनिट उसे नहीं दी जा सकती। इस प्रणाली में अंकन तत्काल छात्र अनुकर्ता द्वारा कर लिया जाता है।''

यह प्रणाली व्यक्तियोन्मुखी है। इसमें 'मास्टरी लर्निगं' तथा 'अभिक्रमित अनुदेशन' की विशेषताओं को समावेशित किया गया है। अत: कहा जा सकता है कि- व्यक्तिगत अनुदेशन कार्यक्रम वह प्रणाली है जिसमें सामूहिक शिक्षण (अनुदेशन) के सभी गुण तथा विशेषताएँ समावेशित करके व्यक्तिगत अनुदेशन प्रदान किया जाता है।

वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम के उद्देश्य-

1. छात्र एवं शिक्षक के बीच परस्पर व्यक्तिगत साहचर्य विकसित करना।
2. छात्रों को वैयक्तिक ढंग से अधिगम की स्वतंत्रता उपलब्ध कराना।
3. छात्रों को उनकी शैक्षिक प्रगति के आधार पर व्यक्तिगत रुप से तत्क्षण प्रति पुष्टि (Feedback) प्रदान करना।
4. छात्र को स्वयं अपनी गति से सीखने एवं उन्नति करने के अवसर प्रदान करना।
5. अधिगम में पुनर्बलन की बारम्बारता में वृद्धि करना तथा व्यक्तिगत मूल्यांकन पर बल देना।

वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम के मूलभूत तत्व –

1. अधिगम में निपुणता
2. अपनी गति (स्व-गति) से अधिगम
3. शिक्षण अनुकर्ता / सहायक (Proctors) का प्रयोग
4. लिखित शब्दों पर जोर
5. अभिप्रेरणाएँ युक्त क्रियाऍ

वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम से लाभ-

इस प्रणाली में निपुणता अधिगम, तत्काल मूल्यांकन का प्रयोग छात्रों को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है।

1. प्रत्येक छात्र अपनी योग्यता और अधिगम गति के अनुसार विषय वस्तु को सीखता है।
2. शिक्षक की भूमिका सुगमकर्ता (Facilitator) के रुप में होती है। जिसका कार्य अधिगम को सरल, सुगम तथा बोधगम्य बनाने वाले साधन के रुप में होता है।
3. छात्र स्वयं अपने प्रयासों से सीखते हैं जिससे वह अधिगम के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो जाते हैं।
4. यह विधि अधिगम की मनोवैज्ञानिक विधि है तथा इसमें छात्रों की तत्परता का ध्यान रखा जाता है।

वैयक्तिक अनुदेशन कार्यक्रम की सीमाएँ-

1. यह प्रणाली केवल निपुणता स्तर के शिक्षण में उपयोगी है।
2. छात्र संख्या अधिक होने पर इस कार्यक्रम का क्रियान्वयन प्रभावी रुप से नहीं हो पाता है।
3. इस विधि का प्रयोग करने के लिए शिक्षक को विशेष प्रशिक्षण प्राप्त होना चाहिए अन्यथा यह प्रणाली सफल नही हो सकती।
4. यह विधि सभी विषयों के शिक्षण हेतु प्रयोग नही की जा सकती है।

(13) कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन

शिक्षण-अधिगम के क्षेत्र में अब कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा रहा है। इस प्रकार कम्पयूटरों की सहायता से चलने वाले शिक्षण अधिगम या अनुदेशन कार्य को ही कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन या कम्प्यूटर निर्देशित अनुदेशन कहा जाता है। शिक्षा-शब्द कोश के अनुसार-''कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन एक स्वचालित अनुदेशनात्मक प्रविधि है, जिसमें स्वचालित आँकड़े तैयार करने वाले उपकरण प्रयोग किये जाते हैं।''

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन से छात्रों को अनेक प्रकार से व्यक्तिगत रुप से भी शिक्षण प्रदान किया जाता है। छात्रों की विभिन्न रुचि, अभिवृत्ति, उपलब्धि आदि के आधार पर व्यक्तिनिष्ठ अनुदेशन तैयार किया जा सकता है।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन की विशेषताएँ-

1. इसमें कम्प्यूटर व छात्र के मध्य होने वाली अन्त: क्रिया अनुदेशन लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होती है।
2. कम्प्यूटर के प्रयोग से छात्र को व्यक्तिगत रुप से उसकी गति व समय के अनुसार अनुदेशन सामग्री प्रदान की जाती है।
3. कम्प्यूटर व छात्र के मध्य अंत: क्रिया एक ट्यूटोरियल उपागम के समान होती है जिससे छात्र सरलता से सीखते हैं।
4. छात्रों को वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट पृष्ठपोषण प्राप्त होता है।

5. इसके माध्यम से छात्रों को अभ्यास के अवसर भी प्रदान किये जाते हैं।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन की सीमाएँ

1. विद्यालयों में इस अनुदेशन प्रणाली हेतु पर्याप्त संसाधनों का अभाव होता है।
2. अधिक समय तक कम्प्यूटर पर कार्य करने से छात्रों के शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।
3. इसमें शिक्षक-छात्र अंत: क्रिया का अभाव होता है तथा भावात्मक क्षेत्र का विकास नही हो पाता है।
4. यह अत्यन्त महँगा एवं खर्चीला है तथा अधिगम के लिए उचित सॉफ्टवेयर भी सरलता से उपलब्ध नही है।

अपनी प्रगति की जाँच 13
कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन का प्रयोग विज्ञान शिक्षण को किस प्रकार प्रभावी बनाता है?
....

4.6 विज्ञान मेला व विज्ञान प्रोजेक्ट

4.6.1 विज्ञान मेला

विज्ञान-शिक्षण में विज्ञान मेले एवं प्रदर्शनियों का आयोजन भी विशेष महत्व रखता है। इनमें छात्रों द्वारा निर्मित विज्ञान सम्बन्धी चीजों, उपकरणों एवं कार्यकारी मॉडलों आदि को प्रदर्शन हेतु रखा जाता है। शिक्षा-शब्दकोश के अनुसार –''विज्ञान मेला छात्रों प्रदर्शनार्थ वस्तुओं का संग्रह है, जिसमें प्रत्येक (वस्तु) जैविक, रासायनिक, भौतिक अथवा तकनीकी सिद्धान्त, प्रयोगशाला विधि अथवा औद्योगिक विकास के लिए कुल प्रक्रियाएं प्रदर्शित करने के लिए तैयार की जाती है।''

विज्ञान मेला आयोजन के उद्देश्य -

विज्ञान मेले के आयोजन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. विज्ञान एवं वैज्ञानिक कौशलों में जन साधारण की रुचि उत्पन्न करना।
2. वैज्ञानिक विचारों के लाभों से जन साधारण को परिचित कराना।
3. वैज्ञानिक तत्वों, विधियों एवं तकनीकी के मध्य सम्बन्धों का ज्ञान कराना।
4. खोज एवं सृजनात्मकता की प्रवृत्ति का विकास करना।
5. छात्रों के मध्य परस्पर सहयोग की भावना का विकास करना।

(1) विज्ञान के ज्ञान तथा वैज्ञानिक कौशलों के प्रति छात्रों में रुचि उत्पन्न करना।

विज्ञान मेले का संगठन –

विज्ञान मेले का आयोजन करने हेतु निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए -

1. **नियोजन** – इसमें विज्ञान मेला के उद्देश्य, क्षेत्र, विधि, आय एवं व्यय के स्रोत, स्थान आदि का निर्धारण किया जाता है।
2. **कार्यो का विभाजन** – नियोजन के उपरान्त अनेक समितियों का निर्माण किया जाता है जो विभिन्न प्रकार के कार्यो का संचालन करती हैं।

3. **आयोजन** – निर्धारित स्थान व तिथि को मेले का उद्घाटन कराया जाता है। इसमें वस्तुओं के प्रदर्शन की उचित व्यवस्था की जाती है।
4. **निर्णय** – विभिन्न समितियों के निर्णायक मण्डल द्वारा प्रत्येक प्रदर्शित वस्तु का निर्णय किया जाता है तथा छात्रों को पुरस्कार दिये जाते हैं।

विज्ञान मेला से लाभ –

1. इसके द्वारा छात्रों की सृजनात्मक शक्ति का विकास होता है।
2. छात्रों में विज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।
3. इसके द्वारा छात्रों के मध्य परस्पर सहयोग की भावना का विकास होता है।
4. छात्रों में वैज्ञानिक प्रतिभा तथा तर्कपूर्ण चिन्तन क्षमता का विकास होता है।

विज्ञान मेला हेतु सावधानियाँ –

1. आयोजन स्थल पर पर्याप्त जगह तथा सुरक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।
2. जल एवं विद्युत की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. प्रदर्शित की जाने वाली वस्तुओं पर टिप्पणी सहित नाम पट्टिकाएं अवश्य लगी हों।
4. प्रदर्शित की जाने वाली वस्तुओं को विषय क्रम के अनुसार लगाना चाहिए तथा प्रयोगों के संचालन हेतु छात्रों को उपस्थित होना चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच

1. आपको अपने विद्यालय में विज्ञान मेले का आयोजन करना है, आप किस प्रकार प्रभावी कार्य योजना कानिर्माण करेंगे ?

4.6.2. विज्ञान प्रोजेक्ट

शिक्षा ज्ञान, मूल्य, कुशलताओं एवं अभिवृत्ति के रुप में बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया है। शिक्षा के माध्यम से व्यवहार में परिवर्तन लाने हेतु अध्यापक प्रत्येक परिस्थिति में एक ही विधि का प्रयोग नहीं करता है, अपितु विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों, प्रयोगों एवं तकनीकों का प्रयोग किया करता है। विज्ञान शिक्षण में प्रोजेक्ट के माध्यम से स्वाभाविकता व सजीवता आती है। प्रोजेक्ट कार्य में बालक को स्वाभाविक परिस्थितियाँ प्राप्त होती है, जिसमें वह उद्देश्यपूर्ण किसी समस्यामूलक कार्य को सजीवता से पूर्ण करने में सफल होता है।

डॉ. विलियम किलपैट्रिक के अनुसार –''प्रोजेक्ट एक तन्मयतापूर्ण तथा उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जिसका सामाजिक वातावरण में विकास होता है।''

प्रो. जे. ए. स्टीवेन्सन के अनुसार –''प्रोजेक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जो अपनी स्वाभाविक परिस्थितियों में पूर्णता को प्राप्त करता है"।

प्रोजेक्ट के चरण-

विज्ञान प्रोजेक्ट में निम्न चरणों का अनुसरण किया जाता है-

(1) समस्या का चयन

(2) नियोजन

(3) कार्यान्वयन
(4) अभिलेखन
(5) मूल्यांकन

प्रोजेक्ट लेखन के पद –

विज्ञान प्रोजेक्ट की रिपोर्ट लिखने में निम्नलिखित पदों का अनुसरण किया जाता है –

1. प्रोजेक्ट का नाम
2. प्रोजेक्ट का महत्व
3. प्रोजेक्ट के उद्देश्य
4. प्रोजेक्ट हेतु उपयोगी सामग्री
5. प्रोजेक्ट की क्रियाविधि
6. प्रोजेक्ट का परिणाम

विज्ञान में कुछ प्रोजेक्ट कार्य –

1. विज्ञान संग्रहालय की स्थापना
2. शुष्क सेल, अग्निशमन, साधारण मोटर आदि बनाना
3. प्रदूषण स्तर व उसके घटकों का अध्ययन करना
4. विज्ञान उपकरणों का निर्माण
5. कृषि यन्त्रों का निर्माण
6. विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन

अपनी प्रगति की जाँच
विज्ञान के क्षेत्र में प्रोजेक्ट का क्या महत्व है ? किसी एक मौलिक परियोजना का चयन करते हुए रिपोर्ट प्रस्तुत कीजिए।
....

4.7 विज्ञान सीखने सिखाने में आई. सी. टी. (ICT) का प्रयोग

विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में आई. सी. टी. के प्रयोग से सम्पूर्ण विश्व में उपलब्ध ज्ञान व सूचनाओं का आदान-प्रदान सम्भव हो सका है। आई. सी. टी. का विस्तृत रुप "Information and Communication Technology" है जिसका अर्थ सूचना एवं संचार तकनीकी होता हैं। विज्ञान शिक्षण में आई. सी. टी. का प्रयोग विभिन्न रुप में अधिगम में सहायक होता है जैसे प्रोजेक्ट कार्य, दत्तकार्य तथा अन्य शिक्षण अधिगम अनुभवों को प्रदान करना। विज्ञान शिक्षण में आई. सी. टी. का प्रयोग मुख्यत: निम्न क्षेत्रों में किया जा सकता है-

(1) शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने हेतु
(2) मूल्यांकन कार्य हेतु
(3) प्रकाशन संबंधी कार्य हेतु
(4) अनुसंधान कार्य

(5) प्रशासन कार्य

विज्ञान शिक्षण में आई. सी. टी. के प्रयोग से शिक्षण प्रक्रिया में कई परिवर्तन आयें हैं। इन परिवर्तनों का प्रभाव मुख्य रुप से शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम, शिक्षक के दायित्व, कक्षा वातावरण, मूल्यांकन प्रक्रिया का कक्षा-कक्ष प्रबंधन में देखा जा सकता है। निश्चित रुप से इन क्षेत्रों में आये परिवर्तन शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में सहायक हैं।

4.7.1 ई-लर्निंग

आज शिक्षा के क्षेत्र में सूचना व संचार तकनीकी आधारित विशेष प्रणालियाँ शिक्षा की प्रक्रिया को कार्यान्वित करने में विशेष माध्यम के रुप में सेवा प्रदान करती हैं। ई-लर्निंग (ई-शिक्षा) को सभी प्रकार के इलेक्ट्रानिक समर्थित शिक्षा और अध्यापन के रुप में परिभाषित किया जाता है जो स्वाभाविक रुप में क्रियात्मक होते हैं और जिनका उद्देश्य शिक्षार्थी के व्यक्तिगत अनुभव अभ्यास और ज्ञान के संदर्भ में ज्ञान निर्माण को प्रभावित करना है।

ई-शिक्षा अनिवार्य रुप से कौशल एवं ज्ञान का कम्प्यूटर एवं नेटवर्क समर्थित माध्यम है। ई-शिक्षा के अनुप्रयोगो और प्रक्रियाओं के अन्तर्गत निम्न तत्व सम्मिलित हैं-

(1) वेब आधारित शिक्षा

(2) कम्प्यूटर आधारित शिक्षा

(3) आभासी कक्षाएँ

(4) डिजीटल कार्यक्रम

(5) एडुसैट का प्रयोग

ई-शिक्षा की प्रक्रिया में कम्प्यूटर आधारित गतिविधियों को व्यावहारिक या कक्षा-आधारित परिस्थितियों के साथ एकीकृत किया जाता है।

अपनी प्रगति की जाँच 12
आई.सी.टी. का प्रयोग विज्ञान के क्षेत्र में शिक्षण अधिगम को किस प्रकार प्रभावी बनाने में सहायक है ? अपने उत्तर की पुष्टि विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से कीजिए।
....

4.8 निकटवर्ती परिवेश से सीखने –सिखाने के संसाधनों को खोजना और कक्षा में उनका प्रयोग करना–

शिक्षक को विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रदान करते समय स्थानीय आवश्यकताओं, अपेक्षाओं एवं संसाधनों के ज्ञान को अपनी क्रियाओं, प्रयोगशाला कार्यो, तथा प्रोजेक्ट कार्यो में अभिन्न अंग बनाना चाहिए। इस प्रकार स्थानीय समुदाय एवं शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं की पूर्ति होती है तथा वह अपने परिवेश में होने वाली प्राकृतिक घटनाओं के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने में सक्षम हो पाते हैं। शिक्षक को विज्ञान शिक्षण में स्थानीय आवश्यकताओं, अपेक्षाओं, और संसाधनों की उपलब्धता के दृष्टिगत शिक्षण विधियों, कार्यनीतियों एवं सामग्री आदि का चयन और उनका प्रयोग करना चाहिए। इस कार्य हेतु शिक्षक

पाठ्यक्रम के लचीलेपन द्वारा रचित पाठ्यक्रम को अंगीकृत करते समय, कक्षा शिक्षण कार्य में स्थानीय संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उपरान्त उसे समाहित करता है।

निकटवर्ती परिवेश के संसाधनों का प्रयोग सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में करने में छात्र अधिगम में रुचि रखते हैं तथा प्राप्त ज्ञान उनके दैनिक जीवन से जुडा होने के कारण अधिक स्थायी होता है। विज्ञान के नियमों व सिद्धान्तों की व्याख्या जब उदाहरणों के रुप में परिवेश में उपलब्ध वस्तुओं व क्रियाओं के माध्यम से की जाती है तो छात्र विषयवस्तु को सरलता से समझ जाते हैं। शिक्षक, छात्रों को कक्षा के बाहर वस्तुओं व घटनाओं के वास्तविक अवलोकन के लिए भी ले जा सकते हैं तथा वहां उपलब्ध अधिगम सामग्री को संकलित भी किया जा सकता है। इसी प्रकार विज्ञान शिक्षण में किसी स्थान विशेष की समस्याओं, घटनाओं आदि से सम्बन्धित प्रोजेक्ट कार्य भी छात्रों को प्रदान किये जाते हैं जिससे उन्हें परिस्थितियों का वास्तविक व व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त हो सके।

4.9 विज्ञान किट का निर्माण

विज्ञान शिक्षण में प्रयोगात्मक कार्य का विशेष महत्व होता है। विज्ञान प्रयोग पर आधारित होता है अत: विज्ञान शिक्षण में इस बात पर विशेष रुप से बल दिया जाता है कि छात्र जो कुछ भी सीखे प्रयोग के आधार पर सीखें। भारत जैसे विकासशील देश में अभी भी संसाधनों का एक कुशल प्रशिक्षित शिक्षकों के अभाव में विज्ञान की कक्षाओं में प्रत्यक्ष ज्ञान प्रदान करने में विज्ञान किट का उपयोग किया जाना चाहिए। विज्ञान किट, विज्ञान के प्रयोगों को सुविधापूर्वक कक्षा में प्रदर्शित करने हेतु एक संसाधन के रुप में प्रयुक्त की जाती है।

वर्तमान में विज्ञान शिक्षण हेतु, विभिन्न कक्षा स्तरों में प्रयोग की जाने वाली विज्ञान किट का निर्माण एन.सी.ई.आर.टी. तथा अन्य संस्थाओं द्वारा किया जा रहा है। विज्ञान के प्रभावी शिक्षण हेतु यह आवश्यक है कि कुछ प्रयोगों को कक्षा में व्याख्या के उपरान्त बच्चों के समक्ष करके दिखाया जाय। इन प्रयोगों को करने हेतु कुछ विशिष्ट प्रकार के उपकरणों व पदार्थो की आवश्यकता होती है। जब इन आवश्यक उपकरणों व पदार्थो का संग्रह एक जगह एक बॉक्स में किया जाता है तो उसे विज्ञान किट कहते है।

विज्ञान किट के लाभ-

1. इसमें विभिन्न प्रयोगों को करने हेतु आवश्यक पदार्थ एवं उपकरण एक स्थान पर उपलब्ध होते हैं!
2. तैयार की गयी कार्य निर्देशिका के अध्ययन से विभिन्न प्रयोग छात्रों को दिखाये जा सकते हैं।
3. विज्ञान किट के प्रयोग से विभिन्न प्रयोग अल्प समय में कक्षा में दिखाए जा सकते हैं।
4. विज्ञान किट को सरलता से कक्षा एवं कक्षा के बाहर प्रयोग करने हेतु ले जाया जा सकता है।
5. विज्ञान के ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु इनका प्रयोग छोटे गॉवों व बस्तियों में किया जा सकता है क्योंकि इन्हें सुगमता से वहाँ ले जा सकते हैं।
6. किट में प्रयुक्त पदार्थ व उपकरण सस्ते होते हैं तथा सामान्य रुप से उपलब्ध होते हैं। समय-समय पर इन्हें किट में पुन: एकत्र करने में सृजनात्मक क्षमता का विकास होता है।
7. इसके प्रयोग से छात्र विषयवस्तु को करके सीखते हैं जिससे उनके आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।

विज्ञान किट का प्रभावी उपयोग –

विज्ञान शिक्षक को उच्च प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर आदि हेतु उपलब्ध विभिन्न विज्ञान किट का अध्ययन, निर्देशिका तथा एन. सी. ई. आर. टी. द्वारा आयोजित विभिन्न कार्यशालाओं के आधार पर करना चाहिए। विज्ञान शिक्षक कक्षा में छात्रों के स्तर के आधार पर प्रयोग करने में उनसे सहयोग ले सकता है। किसी स्थान विशेष पर प्रयोग की जाने वाली विज्ञान किट में स्थानीय संसाधनों का उपलब्धता के आधार पर समावेश किया जाना चाहिए। शिक्षक इस कार्य में छात्रों के सहयोग से उपलब्ध पदार्थो व उपकरणों को विज्ञान किट के निर्माण में स्थानीय आवश्यकता के अनुसार कर सकता है।

अपनी प्रगति की जाँच 13
विज्ञान शिक्षण में विज्ञान किट का प्रयोग किस प्रकार शिक्षण अधिगम को प्रभावी बनाता है ? स्पष्ट कीजिए।
....

4.10 विज्ञान में प्रायोगिक कार्य के द्वारा सीखना – सिखाना

विज्ञान-शिक्षण में प्रायोगिक कार्य की विशेष उपयोगिता है क्योंकि विज्ञान का अध्ययन प्रायोगिक कार्य के बिना पूरा नही हो सकता है। डॉ. डी. एस. कोठारी के अनुसार-

“Tolearn science is to do science. There is no other way oflearning science.”

विज्ञान शिक्षण का उद्देश्य छात्रों को केवल ज्ञान प्रदान करना ही नहीं है, अपितु उनमें विभिन्न कुशलताओं एवं योग्यताओं का विकास करना है जिनसे उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो सके। विज्ञान के नियमों एवं सिद्धान्तों को समझाने में विज्ञान –शिक्षक बहुधा प्रयोग-प्रदर्शन करते है, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यदि यही प्रयोग छात्र स्वयं प्रयोगशाला में करते हैं तो इनकी उपयोगिता और बढ़ जाती है, क्योंकि इसमें छात्र स्वयं करके सीखते हैं। इस विधि से प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है तथा वह विज्ञान के नियमों एवं सिद्धान्तों को सरलता से सीख जाते है प्रायोगिक कार्य द्वारा वह उपकरणों के प्रयोग करने का कौशल भी प्राप्त करते हैं जिससे वैज्ञानिक प्रयोग करने में दक्ष हो जाते हैं। अत: विज्ञान शिक्षण में प्रायोगिक कार्य के द्वारा सीखना –सिखाना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रायोगिक कार्य हेतु सामान्य नियम –

1. प्रयोग से सम्बन्धित सैद्धान्तिक जानकारी, प्रयोग विधि, प्रयुक्त उपकरणों का ज्ञान छात्रों को प्रयोग से पूर्व प्रदान किया जाना चाहिए।
2. प्रयोग से सम्बन्धित पूर्ण विवरण छात्रों को अपनी प्रयोग पुस्तिका में अंकित कर लेना चाहिए।
3. विभिन्न प्रकार के प्रायोगिक प्रेक्षणों को प्रेक्षण तालिका में उचित रुप में अंकित करना चाहिए।
4. शिक्षक द्वारा प्रयोग के समय छात्रों को प्रेक्षण लेने में आ रही कठिनाईयों का समाधान किया जाना चाहिए।
5. सभी प्रेक्षण लेने के बाद उचित रुप से गणना करें तथा प्राप्त परिणाम को पुस्तिका में लिख कर शिक्षक के सुझाव प्राप्त किये जाने चाहिए।

6. प्रायोगिक कार्य करते समय प्रयोगशाला में उचित अनुशासन बनाये रखना चाहिए।
7. प्रयोगशाला में किसी भी उपकरण अथवा सामग्री को शिक्षक की अनुमति से ही लेना चाहिए।

विज्ञान शिक्षण हेतु प्रायोगिक प्रारुप के चरण

1. प्रयोग संख्या
2. दिनांक
3. लक्ष्य
4. सिद्धान्त
5. प्रयोग विधि
6. परिणाम
7. सावधानियाँ

अपनी प्रगति की जाँच
विज्ञान शिक्षण में किसी विषय पर प्रायोगिक प्रारुप का निर्माण कीजिए।
....

4.11 सारांश

शिक्षण अथवा अध्यापन विधियों का शिक्षा के उद्धेश्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षण-विधियों का उद्देश्य केवल बालकों को कुछ बातों का ज्ञान प्रदान करना ही नही, बल्कि अध्यापक और बालकों के पारस्परिक सम्बन्धों में सजीवता लाना है। शिक्षण-विधि वह प्रक्रिया है, जिसकी सहायता से किसी वांछित लक्ष्य अथवा उद्देश्य की प्राप्ति होती है। इसके अन्तर्गत शिक्षक विषय-वस्तु को एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करते हुए विभिन्न क्रियाएँ करता है तथा अपने लक्ष्य या उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है, परन्तु अध्यापक को यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि, विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने लिए विधि का प्रयोग एक साधन के रूप में करना चाहिए न कि साध्य के रूप में। विज्ञान शिक्षण की प्रमुख विधियॉ निम्नलिखित है- व्याख्यान विधि, प्रदर्शन विधि ,व्याख्यान- प्रदर्शन विधि, विचार-विमर्श विधि, अनुसन्धान विधि ,प्रयोजना या परियोजना विधि ,समस्या-समाधान विधि ,प्रयोगशाला विधि। विज्ञान शिक्षण में विषय वस्तु के आधार पर शिक्षक विधि का चयन करके शिक्षण को प्रभावशाली बनाता है। शिक्षक को विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रदान करते समय स्थानीय आवश्यकताओं, अपेक्षाओं एवं संसाधनों के ज्ञान को अपनी क्रियाओं, प्रयोगशाला कार्यो, तथा प्रोजेक्ट कार्यो में अभिन्न अंग बनाना चाहिए।

4.12 संदर्भ ग्रन्थ

कुल श्रेष्ठ, एस. पी. – 'विज्ञान शिक्षण', लॉयल बुक डिपो ,1993
मंगल , एस . के. – 'भोतिकी एवं जीव विज्ञान शिक्षण', आर्य बुक डिपो , नई दिल्ली, 1995

वात्स्यायन टी. – 'विज्ञान शिक्षण की आधुनिक विधियाँ', लोक शिक्षा मंच, नई दिल्ली, 2010
पाण्डेय शशि किरण – 'विज्ञान शिक्षण', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
कुमार आलोक , शिवेन्द्र सोती , वर्मा वीरेन्द्र - 'विज्ञान शिक्षण', इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस , मेरठ , 2003

इकाई -5
विज्ञान में आकलन

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 आकलन का अर्थ
5.4 सतत् और व्यापक मूल्यांकन
5.5 मूल्यांकन: अर्थ एवं परिभाषा
5.6 मापन एवं मूल्यांकन में अन्तर
5.7 मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान
5.8 मूल्यांकन के उद्देश्य
5.9 विज्ञान में मूल्यांकन : अध्यापक निर्मित उपलब्धि परीक्षण
5.9.1 उपलब्धि परीक्षण का अर्थ
5.9.2 उपलब्धि परीक्षणों का महत्व
5.9.3 उपलब्धि परीक्षणों की विशेषताएँ
5.9.4 उपलब्धि परीक्षणों की परिसीमाएँ
5.10 भौतिकीय विज्ञानों में एक उपलब्धि परीक्षण का निर्माण
5.11 परीक्षा प्रणाली
5.11.1 निबन्धात्मक परीक्षा प्रणाली
5.11.2 वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रणाली
5.12 विज्ञान में आकलन के विभिन्न तरीके
5.12.1 प्रदतकार्य (Assignment) द्वारा आकलन
5.12.2 परियोजना (Project) द्वारा आकलन
5.12.3 सृजनात्मक अभिव्यक्ति (Creative Expression) एवं आकलन
5.13 सारांश
5.14 अभ्यास प्रश्न
5.15 संदर्भ ग्रन्थ

5.1 विषय प्रवेश

विद्यालय पाठ्यक्रम का कोई भी विषय क्यों न हो उससे सम्बन्धित शिक्षण-अधिगम सदैव ही उस विषय के लिए निर्धारित शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रयत्नरत रहता है। यह बात विज्ञान शिक्षण के लिए भी पूरी तरह लागू होती है। यहाँ भी विज्ञान अध्यापक कक्षा विशेष के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम का अनुसरण करते हुए अच्छी-से-अच्छी विधियों एवं तकनीकों को काम में लाता हुआ निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रयत्नरत रहता है। अपने इन प्रयत्नों के दौरान उसे यह जानने की उत्सुकता रहती है कि उसके प्रयत्न किस दिशा में जा रहे हैं और उनके फलस्वरूप उसे निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में कितनी और किस रूप में सफलता मिल रही है। यह जानकारी

तभी मिल सकती है जबकि वह यह जाने कि उसके शिक्षण के फलस्वरूप विद्यार्थियों को क्या कुछ उपलब्ध हो रहा है तथा उनके व्यवहार में किस प्रकार के अपेक्षित परिवर्तन आ रहे हैं। इस कार्य में यहाँ उसकी सहायता वे सूचनाएँ तथा आँकड़े करते हैं जिनकी प्राइज़ उसे अपने विद्यार्थियों की उपलब्धि या व्यवहार परिवर्तन का परीक्षण करने, मापने तथा मूल्याँकन के द्वारा होती है। इस दृष्टि से एक अध्यापक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह इन सभी प्रक्रियाओं-परीक्षण, मापन तथा मूल्याँकन की अवधारणा और कार्यप्रणाली से अच्छी तरह अवगत हो जाए। इस अध्याय में हम इन्हीं से अवगत होने की चेष्टा कर रहे हैं।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपके व्यव्हार में निम्नलिखित परिवर्तन संभव हैं

1. आप विज्ञान में आकलन की व्याख्या कर सकेंगे।
2. आप मापन, मूल्यांकन एवं आकलन में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
3. आप विज्ञान में उपलब्धि परीक्षण का निर्माण कर सकेंगे।
4. आप विज्ञान शिक्षण में आकलन के विभिन तरीकों से परिचित हो सकेंगे।

5.3 आकलन का अर्थ

किसी व्यक्ति या वस्तु के उद्देश्य प्राप्ति की दिशा में की गई क्रिया ही आकलन है। आकलन ऐसी प्रक्रिया है जो किसी निर्माणाधीन शिक्षा नीति, योजना अथवा कार्यक्रम, पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधि, शिक्षण सामग्री अथवा मूल्यांकन विधि की संरचना को अंतिम रुप देने से पहले किया जाता है। आकलन का उद्देश्य किसी प्रस्तावित शिक्षा नीति, योजना अथवा कार्यक्रम, पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधि, शिक्षण साधन, अथवा मूल्यांकन विधि की कमियों को जानना, उन कमियों को दूर करना और उपयुक्त शिक्षा नीति, योजना अथवा कार्यक्रम, पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधि, शिक्षण साधन अथवा मूल्यांकन विधि की संरचना करना होता है।

आकलन द्वारा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि-

1- विद्यार्थियों नें क्या सीखा है ? (परिणाम Outcome)

2- वह प्रक्रिया जिसके दूवारा सीखा गया है। (प्रक्रिया Process)

3- क्रिया को सीखने का तरीका: क्रिया से पहले, दौरान तथा क्रिया के बाद में।

इरविन (1991) महोदय ने आकलन को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है:

विद्यार्थियों के विकास व सीखने के संबंध में राय को निर्धारित करने का आधार ही आकलन हैं, यह सूचनाओं के परिभाषीकरण, चयन, संकलन, विश्लेषण, विवेचन व प्रयोग की प्रक्रिया है जिससे कि विद्यार्थियों के सीखने तथा विकास प्रक्रिया में वृध्दि हो सके।

अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि आकलन का उद्देश्य विद्यार्थी की निष्पत्ति एवं विकास में वृद्धि करना होता है। इस हेतु उपलब्ध आंकडो का चयन व विवेचन व्यवस्थित ढंग से किया जाता है।

आकलन का स्तर (leval of Assessment) - आकलन व्यक्तिगत स्तर का है अथवा सामूहिक स्तर का व्यक्तिगत स्तर से तात्पर्य छात्रों की निष्पत्ति तथा विकास प्रक्रिया में वृध्दि हेतु अधिगम प्रकिया को सुदृढ बनाना

तथा उपलब्धियों का लेखा जोखा रखना है तथा सामूहिक स्तर के आकलन का अर्थ अधिगम तथा अध्यापन को उन्नत बनाने के प्रयासों को प्रोत्साहन देना तथा कार्यक्रम का मूल्यांकन हेतु सूचनाएं उपलब्ध कराना है।

आकलन क्यों किया जाये ? (Purpose of Assessment) - आकलन करने का मुख्य उद्देश्य संरचनात्मक तथा योगात्मक (summative) होता है। संरचनात्मक आकलन का उद्देश्य सीखने तथा विकास मे निरन्तर सुधार हेतु अग्रसर रहना तथा योगात्मक आकलन का उद्देश्य मूल्य निर्धारण करना होता है।

आकलन की विषयवस्तु (Content of Assessment) - आकलन की विषयवस्तु व्यक्ति का ज्ञान, कौशल अभिवृति तथा व्यवहार है।

अत: कहा जा सकता है कि आकलन का संबंध केवल छात्र की बौद्धिक उपलब्धि न होकर उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व से है। छात्र के व्यक्तित्व के निम्नलिखित प्रमुख पक्ष आकलन के अन्तर्गत आते हैं -

1. ज्ञान
2. बोध
3. सूचना
4. कुशलताएं
5. प्रवृत्तियां, मूल्य
6. छात्र की त्रुटियां
7. शारीरिक स्वास्थ्य

आकलन के उद्देश्य

आकलन के अपने में न कोई उद्देश्य होते है और न ही कार्य, जिस क्षेत्र मे इनका प्रयोग जिन उद्देश्यों से किया जाता है उस क्षेत्र में इसके वही उद्देश्य होते है और इन उद्देश्य की पूर्ति करना इनके कार्य होते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में आकलन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. प्रवेश के समय प्रवेशार्थियों की योग्यता का मापन करना, उनकी रुचि और रुझान का पता लगाना और इसके आधार पर उन्हे प्रवेश देना।
2. प्रवेश के बाद उनकी बुद्धि एवं व्यक्तित्व का मापन करना और उसके आधार पर उन्हें वर्ग विशेषों में विभाजित करना और समय समय पर व्यक्तित्व निर्माण में सहयोग देना।
3. समय समय पर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों अथवा व्यवहार परिवर्तन का पता लगाना और उसके आधार पर छात्रों का मार्गदर्शन करना, उन्हें सीखने के लिए अभिप्रेरित करना।
4. समय-समय पर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों तथा व्यवहार का आकलन करना और उन्हे पृष्ठपोषण प्रदान करना।
5. समय-समय पर छात्रों की शैक्षिक प्रगति में बाधक तत्वों की जानकारी करना और उनका उपचार करना।

आकलन की विशेषताएं (characteristics of assessment**)**

1. आकलन एक व्यापक पद है जिसमें संरचनात्मक (Formative & Summative) तथा योगात्मक प्रकार के आकलन होते है।
2. आकलन के अन्तर्गत बालक के शारीरिक, मानसिक, नैतिक आदि सभी पक्ष आ जाते हैं।
3. आकलन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।

4. आकलन का शिक्षा के उद्देश्यों से घनिष्ठ संबंध है।
5. आकलन एक प्रकार का सहयोगी कार्य है जिसमें छात्रों अध्यापकों एव अभिभावकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त किया जाता है।
6. आकलन का स्वरूप सुधारात्मक होता है यह छात्र की सिर्फ शैक्षिक लब्धि का ही आकलन नहीं करता।

5.5 सतत् और व्यापक मूल्यांकन(Continuous and Comprehensive Evaluation)

सतत और व्यापक मूल्यांकन (सीसीई- C.C.E.) का अर्थ छात्रों के विद्यालय आधारित मूल्यांकन की प्रणाली है, जिसमें छात्रों के विकास के सभी पक्ष शामिल हैं। यह एक बच्चे के विकास की प्रक्रिया है, जिसमें दोहरे उद्देश्यों पर बल दिया जाता है। ये उद्देश्य एक ओर मूल्यांकन में निरंतरता और व्यापक रूप से सीखने के मूल्यांकन पर तथा दूसरी और व्यवहार के परिणामों पर आधारित है।

यहाँ ''निरंतरता'' का अर्थ इस पर बल देना है कि, छात्रों की "वृद्धि और विकास'' के अभिज्ञात पक्षों का मूल्यांकन एक बार के कार्यक्रम के बजाय एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसे सम्पूर्ण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में निर्मित किया गया है और यह शैक्षणिक सत्र की पूरी अवधि मैं फ़ैली हुई है। इसका अर्थ है मूल्यांकन की नियमितता, अधिगम अंतरालों का निदान, सुधारात्मक उपायों का उपयोग, स्वयं मूल्यांकन के लिए अध्यापकों और छात्रों के साक्ष्य का पृष्ठपोषण (फीडबैक)। दूसरा पद "व्यापक " का अर्थ है शैक्षिक और सह-शैक्षिक पक्षों को शामिल करते हुए छात्र की वृद्धि और विकास को परखने की योजना। चूँकि क्षमताएं, मनोवृत्तियाँ और सोच अपने आप को लिखित शब्दों के अलावा अन्य रुपों में प्रकट करती है, इसलिए यह पद अनेक साधन और तकनीकों के अनुप्रयोग को संदर्भित करता है, (परीक्षणकारी और गैर-परीक्षणकारी दोनों) और यह सीखने के क्षेत्रो में छात्र के विकास के मूल्यांकन पर लक्षित है।

सतत् तथा व्यापक मूल्यांकन के उद्देश्य

सतत् तथा व्यापक मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

- बोधात्मक, मनोप्रेरक और भावात्मक कौशलों के विकास में सहायता।
- सीखने के प्रक्रिया पर बल देना और याद रखने पर बल नहीं देना।
- मूल्यांकन को अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया का अविभाज्य हिस्सा बनाना।
- नियमित निदान के आधार पर उपचार अनुदेशों के बाद छात्रों की उपलब्धि और अध्यापन-अधिगम कठिनाइयों के सुधार के लिए मूल्यांकन का उपयोग करना।
- मूल्यांकन को निष्पादन के वांछित स्तर पर बनाए रखने के लिए गुणवत्ता नियंत्रण युक्ति के रूप में प्रयोग करना।
- सामाजिक उपयोगिता, वांछनीयता या एक कार्यक्रम की प्रभावशीलता का निर्धारण करना और छात्र सीखने की प्रक्रिया और सीखने के परिवेश के बारे में उपयुक्त निर्णय लेना।

सतत् तथा व्यापक मूल्यांकन की विशेषताएँ

सतत तथा व्यापक मूल्यांकन की निम्न विशेषताएं हैं-

- सीसीई के "निरंतर" पक्ष में मूल्यांकन के "निरंतरता" और "आवधिकता" पक्षों का ध्यान रखा जाता है।

- निरंतरता का अर्थ, मूल्यांकन की अनेक तकनीकों का अनौपचारिक रूप से उपयोग करते हुए छात्र का मूल्यांकन अनुदेशों के आरम्भ में (नियोजन मूल्यांकन) और अनुदेशनात्मक प्रक्रिया के दौरान (निर्माणकारी मूल्यांकन) करना है।
- आवधिकता का अर्थ इकाई/कार्य अवधि (सारांश) के अंत में बार-बार निष्पादन का मूल्यांकन करना है।
- सीसीई के "व्यापक" घटक में छात्र के व्यक्तित्व के समग्र विकास का मूल्यांकन करने का ध्यान रखा जाता है। इसमें छात्र की वृद्धि के शैक्षिक और सह-शैक्षिक पक्षों का मूल्यांकन शामिल है।
- शैक्षिक पक्षों में पाठ्यक्रम के क्षेत्र या विषय-विशिष्ट क्षेत्र शामिल हैं, जबकि सह-शैक्षिक पक्षों में जीवन कौशल, सह-पाठ्यक्रमेत्तर कार्यकलाप, मनोवृत्ति और मान्यताएं शामिल हैं।
- शैक्षिक क्षेत्रों का मूल्यांकन निरंतर और आवधिक रूप से मूल्यांकन की अंक तकनीकों का औपचारिक तथा अनौपचारिक उपयोग करते हुए किया जाता है। नैदानिक मूल्यांकन इकाई/कार्य अवधि परीक्षा के अंत में दिया जाता है। कुछ इकाइयों में खराब निष्पादन के कारणों का निदान करने के लिए नैदानिक परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। इनका अनुवर्तन उपयुक्त हस्तक्षेपों और इसके बाद पुन: परीक्षा द्वारा किया जाता है।

सतत् तथा व्यापक मूल्यांकन के कार्य

सतत् तथा व्यापक मूल्यांकन के निम्नलिखित कार्य हैं-

- यह अध्यापक को प्रभावी अध्यापन कार्यनीतियाँ बनाने में सहायता प्रदान करते हैं।
- सतत् मूल्यांकन से छात्र को प्रगति (विशिष्ट शैक्षिक और सह शैक्षिक क्षेत्रों के संदर्भ सहित क्षमता और उपलब्धि) सीमा और नियमित मूल्यांकन में सहायता मिलती है।
- निरंतर मूल्यांकन से कमियों का निदान किया जा सकता है और अध्यापक, छात्र की क्षमताओं, कमियों और ज़रूरतों को इससे सुनिश्चित कर सकते हैं। इससे अध्यापकों को तत्काल पृष्ठपोषण (फीडबैक) मिलता है, जो यह निर्णय ले सकते हैं कि एक विशेष संकल्पना कई छात्रों या पूरी कक्षा को दोबारा पढ़ाने की ज़रूरत है या कुछ ही छात्रों को उपचारात्मक अनुदेश की आवश्यकता है।
- निरंतर मूल्यांकन द्वारा छात्र अपनी क्षमताओं और कमियों को जान सकते हैं। इससे बच्चों को अपने अध्ययन का वास्तविक स्वयं मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है।
- सतत और व्यापक मूल्यांकन मनोवृत्ति और रुचि के क्षेत्रों को अभिज्ञात कराता है। यह मनोवृत्तियों और मूल्य प्रणालियों में बदलावों को अभिज्ञात करने में सहायता देता है।
- निरंतर मूल्यांकन से समय-समय पर छात्र की उपलब्धि, अध्यापकों और माता-पिता में जागरूकता लाने में मदद मिलती है। वे उपलब्धि में आने वाली गिरावट के संभावित कारणों पर विचार कर सकते हैं और अनुदेश के उपचारात्मक उपाय कर सकते हैं। अर्थात् कहाँ अधिक बल देने की आवश्यकता है। कई बार कुछ व्यक्तिगत कारणों से, पारिवारिक समस्याओं या समायोजन की समस्याओं से छात्र अपनी पढ़ाई की उपेक्षा करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप उनकी उपलब्धि में अचानक गिरावट आती है। यदि अध्यापक, छात्र और माता-पिता उपलब्धि में इस अचानक आई गिरावट के बारे में जान नहीं पायेंगे

और बच्चे द्वारा लम्बी अवधि तक पढ़ाई की उपेक्षा जारी रहेगी तो इसके परिणामस्वरूप उपलब्धि में कमी आएगी और बच्चे के सीखने की प्रक्रिया में स्थायी कमी आयेगी।

- सीसीई का प्रमुख बल छात्रों की निरंतर वृद्धि पर है, जिसमें बौद्धिक, भावनात्मक, शारीरिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास सुनिश्चित किया जाए और इसलिए यह केवल छात्र की शैक्षिक उपलब्धि के मूल्यांकन तक सीमित नहीं होगा। इसमें छात्र को प्रेरित करने के साधनों के रूप में मूल्यांकन का इस्तेमाल किया जाता है ताकि, कक्षा-कक्ष में सीखने में सुधार लाने के लिए फीडबैक और अनुवर्तन कार्य की व्यवस्था की जा सके तथा छात्र शिक्षण की रूपरेखा का एक व्यापक चित्र प्रस्तुत किया जा सके।

4.5. मूल्यांकन: अर्थ एवं परिभाषा (Evaluation: Meaning and Definition)

अर्थ (Meaning) – मापन प्रक्रिया के अन्तर्गत जहाँ वस्तु को आंकिक स्वरूप प्रदान किया जाता है, वहीं मूल्यांकन में इसके विपरीत उस वस्तु का मूल्य निर्धारित किया जाता है अर्थात्, मूल्यांकन में इस सत्य का निर्माण किया जाता है कि कौन-सी चीज अच्छी है और कौन सी चीज बुरी? अत: जब हम किसी व्यक्ति अथवा वस्तु का उसके गुण-दोषों के संदर्भ में अवलोकन करते हैं तो वहाँ 'मूल्यांकन' निहित होता है। शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन को एक तकनीकी शब्द के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस तकनीकी प्रक्रिया के अन्तर्गत न केवल छात्रों की विषय विशेष सम्बन्धी योग्यता की ही जानकारी प्राप्त की जाती है बल्कि यह भी जानने का प्रयास किया जाता है कि उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास किस सीमा तक हुआ है। साथ ही, शिक्षण, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियों आदि की सफलता के बारे में जानकारी प्राप्त करने में भी मूल्यांकन प्रक्रिया का सहारा लिया जाता है। स्पष्ट है कि मूल्यांकन प्रक्रिया एकांगी (One dimensional) न होकर विभिन्न कार्यों की श्रृंखला है जिसके अन्तर्गत मात्र केवल एक ही कार्य निहित नहीं होता वरन् अनेक सोपान सम्मिलित रहते हैं। संक्षेप में, मूल्यांकन एक निर्णयात्मक एवं व्यापक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत विषय-वस्तु की उपयोगिता के विषय में विवेकपूर्ण निर्णय लिया जाता है।

1) रेमर्स, गेज एवं रुमेल (Remmers Gaze and Rummel) – मापन से तात्पर्य ऐसे निरीक्षणों से है जिन्हें परिमाणात्मक रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता हो और जिसे "कितना कुछ" इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त होता हो। (Measurement refers to observation that can be expressed quantitatively and answers the question "how much")

3) क्विलेन तथा हन्ना के अनुसार, "विद्यालय द्वारा हुए बालक के व्यवहार में परिवर्तन के विषय में सांख्यों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया ही मूल्यांकन है"

"Evaluation is the process of gathering and interpreting evidences on changes in the behavior of the students as they progress through school."

- Quillen and Hanna

4) क्लॉजमेयर एवं गुडविन के अनुसार, "शिक्षा में मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह निर्णय किया जाता है कि किसी चीज की मापित सीमा और परिमाण किसी मापदण्ड में स्वीकार्य अथवा वाँछनीय हैं अथवा नहीं।"

"Evaluation in education is the process of judging whether the quantity or extent of something measured is acceptable or desirable in terms of some criterion."

- Klausmeir and Goodwin

5) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार, "मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि उद्देश्य किस सीमा तक प्राप्त किए गए हैं, कक्षा में दिये गये अधिगम अनुभव कहाँ तक प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं और कहाँ तक शिक्षा के उद्देश्य पूर्ण किये गए हैं।"

"Evaluation is the process of determining the extent to which an objective is being attained, the effectiveness of thelearning experiences provided in the classroom and how well the goals of education have been accomplished."

- NCERT

मूल्यांकन, मापन एवं परीक्षण की तुलना में काफी विशद और व्यापक संप्रत्यय है। यह एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थी की प्रगति के बारे में जानने हेतु सभी तरह के अथक प्रयास किए जाते हैं। यह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के परिणामों का परिमाणात्मक एवं गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करता है। यह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के फलस्वरूप विद्यार्थी के व्यवहार के सभी पक्षों में आने वाले परिवर्तनों की जानकारी प्रदान करने में मदद करता है। मूल्यांकन की विधियों एवं तकनीकों का क्षेत्र कुछ परीक्षणों या परम्परागत परीक्षाओं तक ही सीमित न होकर बहु-आयामी साधनों तथा तकनीकों के प्रयोग हेतु काफी लचीलापन तथा व्यापकता प्रदान करता है। इसके द्वारा निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के संदर्भ में शिक्षक, शिक्षार्थी, शिक्षण विधियों तथा शैक्षिक व्यवस्था की गुणवत्ता कैसी रही इस सबकी व्यापक जाँच और मापन पूरी तरह सम्भव है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिये -
1) मूल्यांकन का क्या अर्थ है ?
....

5.6 मापन एवं मूल्यांकन में अन्तर (Difference between Measurement and Evaluation)

प्राय: '**मूल्यांकन**' को **'मापन'** से भ्रमित (Confused) किया जाता है, जबकि ये दोनों एक दूसरे से पर्याप्त भिन्न होते हैं। वस्तुत: मापन किसी वस्तु का अंकात्मक (Quantitative) रूप है जबकि मूल्यांकन मापन के साथ-साथ उस वस्तु का परिमाणात्मक (Qualitative) चित्र भी प्रस्तुत करता है। संक्षेप में, मापन अंकात्मक है तथा मूल्यांकन परिणामात्मक, अथवा यूँ कहें की मापन से हमें यह पता चलता है कि कोई वस्तु कितनी है (How much) ? जबकि मूल्यांकन हमें बताता है कि कोई वस्तु कितनी अच्छी है (How good)? इसके अतिरिक्त मूल्यांकन में इस बात पर भी अधिक ध्यान दिया जाता है कि विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा तक हुई है जबकि मापन में हमारा तात्पर्य केवल इसी बात से रहता है कि हमने कितने विशिष्ट उद्देश्य प्राप्त करने की कोशिश की है। बिना मूल्यांकन के मापन अपूर्ण है।

राइटस्टोन (Wrighstone) ने मापन एवं मूल्यांकन में अन्तर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "मापन में विषय-वस्तु के केवल एक ही पहलू पर ध्यान दिया जाता है जबकि मूल्यांकन सम्पूर्ण वातावरण के संदर्भ में स्थिति का ज्ञान कराता है, उदाहरणार्थ – किसी बालक की गणित में परीक्षा लेने से मात्र हम उसकी गणितीय योग्यता के बारे में ही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं। उसकी रुचियों, क्षमताओं एवं योग्यताओं के बारे में गणित की यह परीक्षा कोई संकेत नहीं करतीं।"

मापन एवं मूल्यांकन में जो अन्तर है उन्हें नीचे तुलना द्वारा और स्पष्ट किया गया है-

मापन (Measurement)	**मूल्यांकन (Evaluation)**
1) मापन का क्षेत्र सीमित होता है। मापन में व्यक्तित्व के कुछ ही आयामों की परीक्षा सम्भव होती है। 2) मापन के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन सम्भव नहीं। 3) मापन एक साधन (Means) है, अपने आप में साध्य (End) नहीं। 4) मापन किसी छात्र के सम्बन्ध में स्पष्ट धारणा व्यक्त नहीं करता।	5) मूल्यांकन का क्षेत्र व्यापक होता है। इसमें छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परीक्षा की जाती है। 6) मूल्यांकन के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। 7) मूल्यांकन अपने-आप में एक साध्य है। 8) मूल्यांकन के आधार पर किसी छात्र के विषय में स्पष्ट धारणा बनाई जा सकती है।

5.7 मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान (Steps of Evaसuation Process)

मूल्यांकन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। इसमें निम्नलिखित तीन पद होते हैं -

(1) शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण (Formulation of Educational Objectives) - सर्वप्रथम शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। इसके बाद विषय-वस्तु से सम्बन्धित उस उद्देश्य का निर्धारण किया जाता है जिसका मूल्यांकन करना होता है। इसके बाद चयन किए हुए उद्देश्य की विस्तृत व्याख्या करनी पड़ती है। यह व्याख्या विशेषत: बालक के व्यवहार परिवर्तनों के रूप में की जाती है। साथ ही ये परिवर्तन पाठ्य-वस्तु से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित किए जाते हैं।

(2) सीखने के उपयुक्त अनुभवों की व्यवस्था करना (Creating Appropriate learning Experiences) – सीखने के अनुभवों का तात्पर्य उन साधनों से है जिनके द्वारा शिक्षण-पद्धतियों, सहायक सामग्री, पाठ्य-पुस्तक, पाठ्य-वस्तु तथा अन्य शैक्षिक उपकरणों की सहायता लेता है। इनकी सहायता से कक्षा में ऐसी स्थिति का निर्माण किया जाता है जिसमें रहकर छात्र नवीन अनुभवों को ग्रहण कर सके।

(3) व्यवहार परिवर्तन के आधार पर मूल्यांकन करना (Evaluation on the Basis of Behavioural Change)- शिक्षा का अंतिम लक्ष्य बालकों के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। यह व्यवहार परिवर्तन विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले विभिन्न विषयों के शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों में होता है। ये पक्ष हैं- 1. ज्ञानात्मक; 2. भावात्मक; 3. क्रियात्मक। मूल्यांकन द्वारा व्यवहार के इन तीनों पक्षों की जाँच की जाती है। व्यवहार के ये पक्ष पृथक्-पृथक् नहीं वरन् एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इस दृष्टि से कोई भी व्यवहार चाहे वह आन्तरिक हो अथवा बाह्य, उसमें तीनों पक्षों का समावेश हो सकता है। अत: इस सोपान के अन्तर्गत शिक्षक उन

प्रविधियों का चयन करता है जो वांछित व्यवहारों के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में प्रमाण प्रदान करती है।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर मूल्यांकन की निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया के तीनों पक्षों के सम्बन्ध को निम्न रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है-

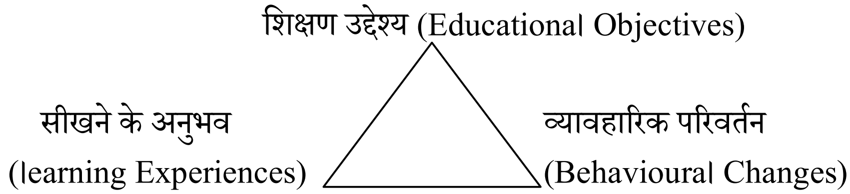

शिक्षण-उद्देश्य शिक्षण-प्रक्रिया का प्राथमिक बिन्दु है। शिक्षण उद्देश्य निर्धारित करने के पश्चात् शिक्षक ऐसे वातावरण की व्यवस्था करता है। जिसमें सभी छात्र क्रियाशील रहते हुए विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त करते हैं। शिक्षक विषयवस्तु को शिक्षण नीतियों (Strategies of Teaching), युक्तियों (Tactics) तथा सहायक सामग्री (Material Aid) की सहायता से प्रस्तुत करता है जिससे उपयुक्त सीखने के अनुभव उत्पन्न होते हैं। यही सीखने के अनुभव विद्यार्थियों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाते हैं। छात्रों की रुचियाँ, अभिवृत्तियाँ, संवेग तथा कार्य करने एवं सोचने-विचारने के ढंग व्यवहार परिवर्तन के लिए आधार प्रस्तुत करते हैं। इस व्यवहार परिवर्तन का पता मूल्यांकन द्वारा कराया जाता है। मूल्यांकन करने के लिए अध्यापक को मूल्यांकन की प्रविधियाँ (Techniques of Evaluation) तथा मूल्यांकन करने की कार्यविधि (Procedure) का ज्ञान होना आवश्यक है।

अत: यह कहा जा सकता है कि मूल्यांकन शैक्षिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। शैक्षिक आदान-प्रदान की समस्त क्रियाओं में मूल्यांकन का विशेष स्थान है। इसके अभाव में शिक्षण की क्रियाएँ मूल्यहीन हो जाती हैं।

5.8 मूल्यांकन के उद्देश्य (Purpose of Evaluation)

शिक्षा प्रक्रिया में मूल्यांकन के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य हैं-

(1) मूल्यांकन का प्रमुख उद्देश्य छात्रों का वर्गीकरण करना है।

(2) मूल्यांकन के द्वारा छात्रों को उचित शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान किया जाता है।

(3) मूल्यांकन के द्वारा पाठ्यक्रम में उचित संशोधन किया जा सकता है।

(4) मूल्यांकन का प्रयोग छात्रों में अधिगम (learning) की मात्रा ज्ञात करने में किया जाता है।

(5) मूल्यांकन के द्वारा शिक्षकों की कुशलता एवं सफलता का मापन किया जाता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिये
मापन एवं मूल्यांकन में कोई दो अंतर बताइए।
....
मूल्यांकन के कोई दो उद्देश्य बताइए।
....

....
मूल्यांकन प्रक्रिया के कौन-कौन से सोपान है ?
....

5.9 विज्ञान में मूल्यांकन: अध्यापक निर्मित उपलब्धि परीक्षण

5.9.1 उपलब्धि परीक्षण का अर्थ- व्यक्ति आने वाली तरुण पीढ़ी के समक्ष अपने अनुभव एवं मूल्य इस उद्देश्य से रखता है ताकि वे सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा कर सकें एवं उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन हों। बालक विद्यालय में रहकर जो कुछ सीखता है उसे हम उपलब्धि (Achievement) कहते हैं तथा इस उपलब्धि की जाँच के लिए जो परीक्षाएँ ली जाती हैं उन्हें उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test) कहते हैं। प्राचीन काल में भी शिक्षक एवं शिक्षालय का प्रथम दायित्व अपने शिष्यों की उपलब्धि का मूल्यांकन करना रहा है। शिक्षा के उद्देश्यों में संशोधन एवं परिवर्तन के साथ-साथ हमारी मूल्यांकन एवं मापन की प्रक्रिया भी बदलती रहती है।

सुपर (Super) के शब्दों में – एक उपलब्धि या क्षमता परीक्षण यह ज्ञात करने के लिए प्रयोग किया जाता है कि व्यक्ति ने क्या और कितना सीखा ताकि वह कोई कार्य कितनी भली प्रकार कर लेता है।"

(An achievement or proficiency test is used to ascertain what and how much has beenlearnt or how well a task has been performed)

5.9.2 उपलब्धि परीक्षणों का महत्व (Importance of Achievement Tests)

उपलब्धि परीक्षणों का महत्व इस प्रकार है-

1. उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति की मूल्यांकन कार्य में निम्नतम योग्यताओं के मापन में सहायक होते हैं।
2. उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों के चयन एवं विद्यालय में छात्रों के प्रवेश हेतु किया जाता है।
3. उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग विभिन्न प्रकार के वर्गीकरण एवं नियुक्ति करने में किया जाता है।
4. ये परीक्षण वर्ग निर्धारण एवं पदोन्नति में प्रयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।
5. ये परीक्षण बालकों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने में भी सहायक होते हैं।

5.9.3 उपलब्धि परीक्षणों की विशेषताएँ (Characteristics of Achievement Test)

उपलब्धि परीक्षणों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

1. इन परीक्षाओं का उदेश्य पूर्व-निर्धारित होता है।
2. ये परीक्षाएँ विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग बनायी जाती है।
3. इन परीक्षणों की पाठ्य-वस्तु छात्रों के स्तर, योग्यताओं, रुचियों एवं क्षमताओं के अनुकूल होती हैं।
4. ये परीक्षण व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी होते हैं।

5.9.4 उपलब्धि परीक्षणों की परिसीमाएँ (limitations of Achievement Tests)

उपरोक्त विशेषताओं के होते हुए भी उपलब्धि के होते हुए भी उपलब्धि परीक्षणों की अपनी कुछ परिसीमाएँ भी हैं जो निम्नवत हैं-

1. इन परीक्षाओं में प्राय: समरूप परीक्षाओं (Parallel form of tests) का अभाव रहता है।

2. उपलब्धि परीक्षाएँ विद्यालय में पढाए जाने वाले केवल कुछ ही विषयों के लिऐ प्राप्य है।कुछ विषय ऐसे भी होते हैं जिनमे इन परीक्षणों का निर्माण कार्य सरल नही होता है।
3. इन परीक्षाओं का निर्माण, मूल्यांकन एवं व्याख्या कठिन कार्य है। साथ ही, इन परीक्षणों के निर्माण में समय एवं शक्ति भी अधिक व्यय होती है।

5.10 भौतिकीय विज्ञानों में एक उपलब्धि परीक्षण का निर्माण (Developing an achievement Test in Biological Sciences)

उपलब्धि-परीक्षाओं का निर्माण एक गम्भीर कार्य है। इसके लिए पर्याप्त योजना की आवश्यकता होती है। निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देकर इस काम को अच्छी प्रकार से किया जा सकता है-

1. लक्ष्य-निर्धारित करना (Setting Objectives)- परीक्षण के लक्ष्य सुनिश्चित होने चाहिए। विद्यार्थियों द्वारा वांछित व्यवहार के विशिष्ट परिवर्तनों के अनुरूप परीक्षण के लक्ष्य पहले से ही निर्धारित किए जाने चाहिए।

2. पूरे पाठ्यक्रम या इकाई विशेष का ध्यान रखना (Coverage of Syllabus) – परीक्षण में निर्धारित की जाने वाली सामग्री प्रत्यक्ष रूप से उस विषय-वस्तु पर आधारित की जानी चाहिए जिसे अध्यापक द्वारा पढ़ाया जा चुका है। अध्यापक को चाहिए कि वह विद्यार्थियों को दिए गए अनुभव की रूपरेखा तैयार कर ले। यद्यपि मुख्य एवं उप प्रकरणों को छोड़ना तो नहीं चाहिए, परन्तु यह भी आवश्यक नहीं कि परीक्षा-पत्र में वह सब कुछ रख दिया जाए जिसे अध्यापक द्वारा कक्षा में पढ़ाया गया है। दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि विद्यार्थियों को दिए गए शिक्षण-अनुभव के विभिन्न तत्वों को उचित रूप से ध्यान में रखकर ही परीक्षा-पत्र का निर्माण करना चाहए।

3. प्रश्नों के प्रकार का निर्णय (Decision about the types of Questions) - प्रश्नों के प्रकार का निर्णय कर लेना भी परीक्षा पत्र के निर्माण का महत्त्वपूर्ण तत्व है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है तीनों प्रकार के प्रश्न–निबन्धात्मक, लघु-उत्तर सम्बन्धी तथा वस्तुपरक-परीक्षा-पत्र में रखने चाहिए।

4. समय का निर्णय (Decision about the time)- विद्यार्थियों को प्रश्नों के उत्तर देने के लिए कितना समय दिया जाएगा-इसका भी पहले से निर्णय कर लेना चाहिए।

5. ब्लू-प्रिंट को तैयार करना (Preparation of the Blue-Print)- परीक्षण योजना का यह सबसे कठिन चरण है। ब्लू-प्रिंट का एक प्रकार का डिजाइन होता है जिसमें विशिष्ट उदेश्यों, प्रश्न के प्रकारों आदि को ध्यान में रखते हुए अंक निर्धारित किए जाते हैं। भौतिकीय विज्ञानों की किसी एक इकाई विशेष के लिए उपलब्धि परीक्षण के निर्माण हेतु ब्लू-प्रिंट कैसे तैयार किया जाए, यह अग्रलिखित दृष्टांत से समझा जा सकता है-

6. प्रश्नों को गठित एवं व्यवस्थित करना (Organizing and arranging the Questions)- परीक्षण में दिए जाने वाले प्रश्नों को उचित रूप से गठित एवं व्यवस्थित करने की आवश्यकता होती है। इसमें निम्नलिखित बातों से सहायता मिल सकती है-

i. निबन्धात्मक एवं वस्तुपरक प्रश्न अलग-अलग भागों में रखे जाने चाहिएं और उनके लिए अलग-अलग समय निर्धारित होना चाहिए।
ii. प्रत्येक भाग के लिए अलग-अलग निर्देश होने चाहिए।
iii. प्रश्न आसान से उत्तरोत्तर कठिन होते जाने चाहिए।

iv. वस्तुपरक प्रश्नों में अधिक प्रश्न देना ठीक नहीं होगा क्योंकि इस प्रकार आदेश पढ़ने में ही विद्यार्थियों का बहुत सा समय नष्ट हो जाता है। यथा सम्भव 'बहु-विकल्पीय' प्रश्न ही देने चाहिए क्योंकि ये अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय एवं वस्तुपरक होते हैं।

7. प्रश्न लिखना और उनकी कठिनाई का अनुमान लगाना (writing items and finding their difficulty value)- उपर्युक्त ढंग से योजना बनाने के पश्चात् अध्यापक को सभी प्रश्न लिखने चाहिए। 20% अधिक प्रश्न लिखना अच्छा होगा ताकि परीक्षा-पत्र को अन्तिम रूप देते हुए फालतू प्रश्नों को हटाया जा सके। परीक्षा पत्र न तो बहुत कठिन होना चाहिए और न ही बहुत आसान। इसके लिए अध्यापक को उसकी कठिनाई पर भी ध्यान देना चाहिए। प्रत्येक प्रश्न की कठिनाई-स्तर को जाँचने के लिए अध्यापक को उस परीक्षण का प्रयोग कुछ विद्यार्थियों पर करना चाहिए। प्रत्येक प्रश्न में उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों के प्रतिशत के आधार पर उस परीक्षण के परिणाम का विश्लेषण करना चाहिए। यदि उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों की प्रतिशत संख्या अधिक हो तो समझ लेना चाहिए कि प्रश्न आसान है। इसी विश्लेषण के आधार पर प्रश्नों का कठिनाई-स्तर निश्चित करना चाहिए।

8. अंकन-तालिका तैयार करना (Preparation of a Scoring key)- अंकन में वस्तुपरकता लाने के लिए आँकन-विधि को पहले से निश्चित किया जाना चाहिए। केवल वस्तुपरक प्रश्नों के लिए ही नहीं बल्कि निबन्धात्मक प्रश्नों तथा लघु-उत्तर सम्बन्धी प्रश्नों के लिए भी आँकन-विधि पहले से निर्धारित होना चाहिए।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर एक भौतिकीय विज्ञान का अध्यापक अपने विद्यार्थियों के लिए उचित उपलब्धि-परीक्षण का निर्माण कर सकता है। परीक्षण लेने के पश्चात् उसे आँकन-तालिका की सहायता से विद्यार्थियों के उत्तर जाँच कर उनका आँकन करना चाहिए। इस प्रकार विद्यार्थियों की उपलब्धियों का भी मूल्याँकन किया जा सकता है और अध्यापक की शिक्षण-विधियों तथा उसके प्रयासों का भी।

ब्लू प्रिंट – भौतिकीय विज्ञान उपलब्धि परीक्षण (Science Achievement Test)

प्रश्नों के प्रकार / इकाई	अति लघु उत्तरीय प्रश्न (1 अंक)	लघु उत्तरीय प्रश्न I (2 अंक)	लघु उत्तरीय प्रश्न II (3 अंक)	दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5 अंक)
रासायनिक पदार्थ	3(3)	4(2)	6(2)	5(1)
जीव जगत	2(2)	6(3)	3(1)	5(1)
विद्युत् धारा का प्रभाव	1(1)	4(2)	-	5(1)
प्रकाश	2(2)	-	6(2)	-
प्राकृतिक संसाधन	1(1)	4(2)	3(1)	-
कुल	**9(9)**	**18(9)**	**18(6)**	**15(3)**

अपनी प्रगति की जाँच कीजिये -
उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में ब्लू प्रिंट का क्या महत्व है?
....
उपलब्धि परीक्षण निर्माण के पदों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
....

5.11 परीक्षा प्रणाली

परीक्षा प्रणाली को निम्न दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. निबन्धात्मक परीक्षा प्रणाली (Essay Type Examination)
2. वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रणाली (Objective type Examination)

5.11.1 निबन्धात्मक परीक्षाएं (Essay Type or, Traditional Examination)

निबन्धात्मक परीक्षाओं से हम सभी भली-भाँति परिचित हैं क्योंकि प्राय: सभी स्कूल एवं कॉलेजों में इनका ही प्रयोग होता है। इन परीक्षाओं की नींव अत्यन्त गहरी है, इसीलिए इन परीक्षाओं को रूढ़िवादी परीक्षाओं के नाम से भी पुकारा जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में परीक्षार्थी किसी भी प्रश्न का उत्तर विस्तार से देता है, उत्तर की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जाती तथा परीक्षार्थी अपने मौलिक विचारों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण स्वतन्त्र होता है। यद्यपि इन परीक्षाओं के माध्यम से परीक्षार्थी की विभिन्न मानसिक योग्यताओं, जैसे- रूचियों, क्षमताओं, अभिवृत्तियों, कौशलों आदि का सही मूल्यांकन सम्भव है, फिर भी ये परीक्षाएं मूलत: इस बात पर विशेष महत्व देती है कि परीक्षार्थी सुन्दर लेख एवं भाषा-शैली के आधार पर तथ्यों को फिर से किस कुशलता के साथ प्रस्तुत कर पाता है।

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

निबन्धात्मक प्रश्नों में निम्न रुपों का समावेश किया जाता है-

(1) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (long Answer Question) - इस प्रकार के प्रश्नों के विस्तृत उत्तर दिए जाते हैं जिनकी कोई सीमा निर्धारित नही की जाती, उदाहरणार्थ-

[i] वर्नियर कैलीपर का विस्तार से सचित्र वर्णन कीजिये।

(2) लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Questions)- इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर परीक्षार्थी को शब्दों की कोई निश्चित सीमा अथवा सात-आठ पंक्तियों में देना होता है। उदाहरणार्थ -

[i] ब्यूरेट का नामांकित चित्र बनाइये-

[ii] ओम का नियम क्या है?

(3) अति-लघु उत्तरीय प्रश्न (Very-Short Answer-Question)- इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर परीक्षार्थी को मात्र एक शब्द ,पंक्ति या दो - तीन वाक्यों में देना होता है। जैसे-

[i] आयतन किसे कहते है?

निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण (Merits of Traditional Type Examination)

निबंधात्मक परीक्षाओं की सामान्य आलोचना के संन्दर्भ में यद्यपि यह कहना कोई महत्व नहीं रखता कि यदि इन परीक्षाओं को सावधानीपूर्वक पूर्व-नियोजित ढंग से प्रयोग में लाया जाए तो प्रभावी परिणाम प्राप्त हो सकते हैं, फिर भी, इन परीक्षाओं में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ अवश्य है, जो निम्नवत हैं -

1. अधिगम के बहुत से पहलू ऐसे हैं जिनका मूल्यांकन केवल निबन्धात्मक परीक्षाएँ ही कर सकती हैं, अन्य परीक्षाएं नहीं।
2. ये परीक्षाएं उच्च मानसिक प्रकियाओं के मापन का सशक्त साधन हैं।
3. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को विचारों की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।
4. इन परीक्षाओं से ज्ञान के गुणात्मक पक्षों, जैसे- शाब्दिक अभिव्यक्ति, भाषा पर अधिकार, साहित्यिक शैली, विचारों का प्रस्तुतीकरण आदि का उचित मूल्यांकन सम्भव है।

निबन्धात्मक परीक्षाओं की सीमाएँ (limitation Of Traditional Examination)

उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त इन परीक्षाओं की अपनी कुछ सीमाएं भी हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. इन परीक्षाएँ में जिन प्रश्नों का चयन किया जाता है वे संम्पूर्ण पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व नही कर पाते।
2. ये परीक्षाएँ सुन्दर लेख एवं परीक्षा युक्तियों (Examination Tactics) पर अधिक जोर देती हैं फलत: कभी कभी परीक्षार्थी परीक्षक को धोखा देने में भी सफल हो जाता है।
3. ये परीक्षाएं रटने (Cramming) पर बहुत अधिक बल देती हैं।

5.11.2 वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ (Objective Type Examinations)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा से तात्पर्य ऐसे परीक्षणों से है जिनकी रचना अध्यापक अपने अनुभवों के आधार पर शिक्षण उद्देश्यों तथा अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तनों की पूर्ति हेतु करता है। इस प्रणाली के अनुसार प्रश्न-पत्र में प्रश्न तो पर्याप्त संख्या में होते हैं लेकिन उनका उत्तर एक या दो शब्दों में ही देना होता है या मात्र निशान लगाना होता है। इन परीक्षाओं का बढ़ता हुआ महत्व प्रवेश परीक्षाओं एवं अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में देखा जा सकता है। शोध कार्यों ने भी निबन्धात्मक परीक्षाओं की विश्वसनीयता की पुष्टि की है। कुछ लोग भ्रमवश यह समझते हैं कि निबन्धात्मक परीक्षाओं एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में विरोध (Anti-thesis) है। लेकिन यहाँ यह स्मरण करना आवश्यक है कि आधुनिकतम अनुसन्धान परिणामों के आधार पर यह कहना अधिक उचित होगा कि एक अच्छे प्रश्न–पत्र में दोनों ही प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्नों को स्थान दिया जाना चाहिए।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के गुण (Merits of Objectives Type Examination)

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की मुख्य गुण या विशेषताएं इस प्रकार हैं-

1. नवीन प्रकार की परीक्षा प्रणाली की अंकन प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ होती है। परीक्षक की मन:स्थिति (Mood) एवं विचारों का अंकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
2. पाठ्यक्रम की दृष्टि से ये परीक्षाएँ अत्यन्त व्यापक होती हैं।
3. ये परीक्षाएँ अध्यापक को किसी छात्र-विशेष के साथ पक्षपात करने का अवसर प्रदान नहीं करतीं।
4. इन परीक्षाओं के माध्यम से अधिगम संबंधी कमजोरियों का निदान आसानी से किया जा सकता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की सीमाएं (limitations of Objectives Type Examination)

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की अपनी कुछ सीमाएं भी हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. ये परीक्षाएं छात्र उपलब्धि के विभिन्न पहलुओं, जैसे- सौन्दर्यात्मक पक्ष, रचनात्मक कल्पना, साहित्यिक शैली, विचारों की अभिव्यक्ति आदि का मापन नहीं कर सकती।
2. एक ही प्रश्न के कई भ्रामक उत्तर देना छात्रों के अपरिपक्व मस्तिष्क पर अनुकूल प्रभाव नहीं डालते। यह शैक्षिक दृष्टि से पूर्णतया अमनोवैज्ञानिक है।
3. निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में इन परीक्षाओं पर अधिक व्यय आता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा-प्रकार (Objective-type Tests Types)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा का तात्पर्य मापन की उस प्रविधि अथवा परीक्षा से है जिसका निर्माण निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए किया जाता है। इनके द्वारा विद्यार्थियों की ज्ञान की उपलब्धि, योग्यता, अभिवृत्ति, अभिरुचि तथा बुद्धि आदि का परीक्षण थोड़े समय में किया जा सकता है। सबसे पहले वस्तुनिष्ठ परीक्षा का लिखित रूप से निर्माण होरास मैन ने 1854 में किया था। इसके पश्चात् जार्ज फिशर, जे.एम. राइस तथा स्टार्च एवं थार्नडाइक आदि विद्वानों ने शैक्षणिक निष्पत्ति (Educational Achievement) के मापन हेतु सैकड़ों वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ बनाई और आज भी विभिन्न प्रकार की वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रयोग छात्रों की निष्पत्ति के मापन के लिए किया जाता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ

प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type)

अभिज्ञान रूप (Recognition Type)

सरल प्रत्यास्मरण (Simple Recall Type)

रिक्त स्थान पूर्ति (Completion Type)

एकान्तर अनुक्रिया रूप (Alternate Response Type)

बहुनिर्वचन रूप (Multiple Choice Type)

समानता रूप (Matching type)

वर्गीकरण रूप (Classification Type)

सादृश्य अनुभव रूप (Analogy Type)

1. प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type)

(1) सरल प्रत्यास्मरण परीक्षाएँ (Simple Recall Type Tests) – प्रत्यास्मरण परीक्षाएँ उन को कहते हैं जिनमें छात्रों के तथ्यात्मक ज्ञान की परीक्षा लेने के लिए प्रश्न पूछे जाते हैं। इन प्रश्नों के उत्तरों को विद्यार्थी अपनी स्मृति अथवा पूर्व अनुभवों के आधार पर केवल एक शब्द या संख्या में देते हैं।

उदाहरण-निर्देश-निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सामने के कोष्ठकों में लिखिए-

1.बर्फ पदार्थ की कौन-सी अवस्था है ?

(2) वाक्य पूर्ति परीक्षाएँ (Completion Test) – इन परीक्षाओं के निर्माण में परीक्षक प्रश्न में एक अथवा दो शब्दों को छोड़ देता है। विद्यार्थी वाक्य रिक्त स्थान अथवा स्थानों को **प्रत्यास्मरण** की सहायता से पूरा करते हैं।

उदाहरण-निर्देश-निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. $NaCI + H_2SO_4$=............ + ...

2. अभिज्ञान रूप (Recognition Type Test)

(1) एकान्तर अनुक्रिया रूप (Alternate Response Type)- इसमें एक कथन होता है। वह सत्य या असत्य होता है। छात्र को दो विकल्पों में से एक को छाँटने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार इन प्रश्नों का कभी-कभी 'हाँ या नहीं' में उत्तर देना पड़ता है। इस कारण इन्हें 'हाँ या नहीं' वाले प्रश्न भी कहा जाता है।

उदाहरण-निर्देश-निम्नलिखित कथन सही हो तो सत्य और गलत हो तो असत्य को रेखांकित कीजिए-

2. सूर्य से पृथ्वी तक ऊष्मा का संचरण संवाहन द्वारा होता है। (सत्य, असत्य)

(2) बहुनिर्वचन रूप (Multiple Choice Type Tests)- ऐसे पदों में एक कथन के उत्तर के रूप में अनेक विकल्प दिये रहते हैं। छात्रको इनमें से सबसे उपयुक्त सही विकल्प को छाँटना होता है। इस प्रकार के पद जटिल विचार अथवा व्याख्याओं की जाँच के लिए प्रस्तुत किए जाते हैं।

उदाहरण-निर्देश-सही उत्तर पर निशान (√) लगाइए-

(1) सूर्य क्या है?

(i) ग्रह; (ii) उपग्रह;

(iii) तारा (iv) इनमें से कोई नहीं

3. समानता रूप (Matching Type Tests)

इस प्रकार के पद में दो स्तम्भों में कुछ शब्द, संख्याएँ, संकेत, परिभाषा आदि दी होती हैं। छात्र से स्तम्भ के पदों की दूसरे स्तम्भ के पदों के साथ तुलना के लिए कहा जाता है। इनके द्वारा छात्र सम्बन्धों की पहचान करना सीखते हैं।

उदाहरण-निर्देश-स्तम्भ "अ'' के बाएँ कोष्ठक में स्तम्भ "ब'' से सही पदों को चुनकर उनकी संख्या लिखिए-

स्तम्भ (अ)	स्तम्भ (ब)
(1) 1. लम्बाई	i. स्प्रिंगतुला
2. धारा	ii. वर्नियर पैमाना
3. भार	iii. विभवमापी
4. विभवान्तर	iv. एमीटर

4. वर्गीकरण रूप (Classification Type Tests)

इस प्रकार के प्रश्नों के अन्तर्गत कुछ ऐसे शब्दों का समूह छात्रों के समक्ष रखा जाता है जिनमें से एक शब्द **असंगत या बेमेल** होता है। छात्र से उस बेमेल शब्द को छाँटने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार के प्रश्नों की रचना करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि एक प्रश्न में 5 या 6 शब्द हों। साथ ही उनमें एक सम्बन्ध हो।

उदाहरण-निर्देश-प्रत्येक प्रश्न में पाँच शब्द दिए हुए हैं, प्रत्येक प्रश्न के इन पाँच शब्दों में एक ऐसा शब्द है जो अन्य चार शब्दों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। प्रत्येक प्रश्न में ऐसे शब्द के नीचे रेखा खींचिए-

(1) तोता, चमगादड़, कोयल, गिलहरी, पतंग।

5. सादृश्य अनुभव रूप (Analog Type Tests)

इनमें दो समान परिस्थितियों को प्रस्तुत किया जाता है। पहली परिस्थिति पूर्ण, दूसरी अपूर्ण होती है। पहली परिस्थिति के आधार पर समान सम्बन्ध स्थापित करते हुए दूसरी परिस्थिति की पूर्ति की जाती है।

उदाहरण-निर्देश-निम्नांकित प्रश्नों में दो परिस्थितियाँ प्रयुक्त की गई हैं। दूसरी परिस्थिति अपूर्ण है। पहली के आधार पर दूसरी की पूर्ति कीजिए।

(1) ताप : थर्मामीटर :: : बैरोमीटर

(2) लोहा : :: फॉस्फफोरस : अधातु

अपनी प्रगति की जाँच कीजिये

निबन्धात्मक परीक्षाओं के कोई दो प्रमुख गुण लिखिए।
....
निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में क्या अंतर है?
....

5.12 विज्ञान में आकलन के विभिन्न तरीके

5.12.1 प्रदत्तकार्य (Assignment) द्वारा आकलन

प्रदत्तकार्य शैक्षिक क्रिया का वह भाग है, जिसे विद्यार्थियों को पूरा करने के लिए दिया जाता है। प्रदत्तकार्य का निर्माण निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर किया जाता है -

- अधिगम के लक्ष्य को ध्यान में रखना चाहिए।
- इसकी रचना रोचक व चुनौतीपूर्ण होनी चाहिये।
- इसे अच्छी तरह से जांच लेना चाहिए अर्थात् इसके बनाने के बाद पुन: अधिगम लक्ष्य का मिलान करना व यह निश्चित करना कि शिक्षक, छात्र को क्या सिखाना चाहता है।
- इसका नामांकरण यथार्थ रूप से करना चाहिए।
- छात्र की साध्यता के आधार पर निर्मित हो।
- स्पष्ट निष्पादन मापदंड स्थापित होने चाहिए।

- इसका विशिष्ट प्रयोजन होना चाहिए।
- मापदंड उल्लेखित होने चाहिए।

प्रदत्तकार्य के कार्य

प्रदत्तकार्य के कार्य निम्नानुसार व्यक्त किये गए हैं-

- **प्रदत्तकार्य** के माध्यम से छात्र अध्ययन का उद्देश्य प्राप्त करने में सक्षम होता है। यह उद्देश्य छात्र के कार्यकलाप को नयी दिशा व निश्चितता प्रदान करता है।
- छात्र **प्रदत्तकार्य** के समय आयी कठिनाइयों को बुद्धिमत्ता से निवारण करने योग्य बनता है।
- यह छात्रों को उनकी ज़िम्मेदारी का एहसास करवाता है कि, उसे कार्य क्यों पूर्ण करना होता है।
- इसके माध्यम से छात्र पूर्व ज्ञान का उपयोग कर नए ज्ञान का अर्जन करता है।
- दिए गए कार्य के निष्पादन के लिए छात्र उचित अभिवृत्ति विकसित करता है।

5.12.2 परियोजना (Project) द्वारा आकलन

जॉन डीवी (John Dewey) के शिष्य डब्लु.एच. किलपैट्रिक (W.H. Kilpatrik) ने इस विधि को जन्म दिया। उनके अनुसार ''प्रायोजना'' वह क्रिया है, जिसमें पूर्ण संलग्नता के साथ सामाजिक वातावरण में लक्ष्य प्राप्त किया जाता है।'' इस विधि में छात्रों के समक्ष एक समस्या प्रस्तुत की जाती है और छात्र उसका हल निकालने में लगे रहते हैं। इसमें छात्र अपनी रुचि व इच्छा के अनुसार कार्य करता है।

परियोजना के पद

प्रत्येक प्रायोजना को निम्नांकित भागों में बांटा जाता है-

1. **परियोजना का चयन** – शिक्षक को ऐसी परिस्थिति का निर्माण करना चाहिए जिसमें छात्र स्वयं योजनाए बनाने लगें। इस प्रकार से छात्रों द्वारा प्राप्त विभिन्न प्रायोजनाओं पर स्वतन्त्रतापूर्वक छात्र एवं शिक्षक मिलकर विचार-विमर्श करें। जहां तक हो सके छात्रों को स्वयं ही प्रायोजना के चयन का अवसर मिलना चाहिए। शिक्षक को आवश्यकतानुसार चयन की प्रक्रिया में परामर्श देना चाहिए।
2. **रूपरेखा तैयार करना-** प्रायोजना के चयन के पश्चात् उसे पूर्ण करने के लिए कार्यक्रम बनाना चाहिए। कार्यक्रम के निर्धारण में छात्रों को विचार-विमर्श के लिए पूर्ण छूट होनी चाहिए।
3. **कार्यक्रम का क्रियान्वयन** – कार्यक्रम की रूपरेखा बनाने के बाद प्रयोजना के अंतर्गत कार्य प्रारम्भ हो जाता है। जिन छात्रों को जो उत्तरदायित्व सौंपे गए है, वे पूरे करना शुरू कर देते हैं। छात्रों को अपने उत्तरदायित्व पूरे करने के लिए विभिन्न प्रकार का ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है। इस प्रकार प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी होता है।
4. **मूल्यांकन** – योजना पूर्ण होने के बाद शिक्षक एवं छात्र मिलकर मूल्यांकन करते हैं। प्रायोजना के उद्देश्य के आधार पर प्रायोजना की सफलता तथा असफलता पर विचार किया जाता है। समय-समय पर छात्र अपने-अपने कार्य पर विचार करते हैं, की गई गलतियों को ठीक करते हैं और उपयोगी ज्ञान की पुनरावृत्ति करते हैं।

परियोजना नीति की विशेषताएं

प्रायोजना नीति की निम्न विशेषताएं हैं-

1. छात्र स्वयं चिंतन करके पढते है और कार्य करते हैं।
2. छात्र पूरी योजना में सिक्रय रहता है।
3. इसमें शारीरिक एवं मानसिक, दोनों प्रकार के कार्य ही छात्रों को करने पड़ते हैं, फलस्वरूप श्रम के प्रति उनमें निष्ठा जागृत होती है।
4. छात्र अपने उत्तरदायित्वों को समझता है एवं पूरा करता है।
5. छात्रों में धैर्य, संतोष तथा आत्म-संतुष्टि के भाव जागृत होते हैं।
6. यह मनोवैज्ञानिक विधि है।
7. यह 'स्वयं करके सीखने' पर आधारित है।
8. विभिन्न विषयों में सहयोग स्थापित होता है।
9. प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।

परियोजना नीति के दोष

परियोजना नीति के दोष निम्न प्रकार से हैं-

1. यह कक्षा शिक्षण से अधिक समय लेती है।
2. ज्ञान क्रमबद्ध तरीके से प्राप्त नहीं होता।
3. निश्चित पाठ्यक्रम इस नीति से पूरा करना कठिन है।
4. शिक्षक को अधिक परिश्रम करना पड़ता है।
5. अधिक व्यय-साध्य है।
6. अनुभवहीन शिक्षकों के लिए कठिनाइयां पैदा करने वाली है।
7. वास्तविक सिद्धांतों का सही ज्ञान नहीं होता।

5.12.3 सृजनात्मक अभिव्यक्ति (Creative Expression) एवं आकलन

सृजनात्मकता को प्रदर्शित करने की प्रक्रिया को सृजनात्मक अभिव्यक्ति कहा जाता है। सृजनात्मकता को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है-

स्किनर (Skinner) – "सृजनात्मक चिंतन का अर्थ यह है कि, व्यक्ति की भविष्यवाणियाँ या निष्कर्ष, नवीन, मौलिक, अन्वेक्षणात्मक तथा असाधारण हों। सृजनात्मक चिन्तक वह है जो नए क्षेत्र की खोज करता है, नए निरीक्षण करता है, नई भविष्यवाणियाँ करता है और नए निष्कर्ष निकालता है।"

अत: सृजनात्मकता व्यक्ति की वह योग्यता है, जिसके द्वारा वह किसी नए विचार या नयी वस्तु का निर्माण करता है। इसके अंतर्गत व्यक्ति की यह योग्यता भी शामिल है जिसके द्वारा वह पूर्व प्राप्त ज्ञान का पुनर्गठन करता है।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति के परीक्षण

छात्र की सृजनात्मक प्रवृत्ति को परीक्षण के माध्यम से अभिव्यक्ति करवा कर मापा जा सकता है, जो निम्न प्रकार से हैं-

1. **चित्र पूर्ति परीक्षण-** छात्र को अधूरे चित्र देकर उन्हें पूरा करने को कहा जाता है और छात्र नए विचार उत्पन्न करता है। नयी अनुभूतियाँ व नए आयाम द्वारा रेखाएं खींच कर अपने ढंग से इन चित्रों में कोई नया रूप देकर अपनी सृजनात्मकता को अभिव्यक्त करता है।
2. **समानांतर रेखा परीक्षण** – इस परीक्षण में छात्र अपनी सृजनात्मकता को रेखाओं के जोड़े बनाकर अभिव्यक्त करता है।
3. **पूँछना और अनुमान लगाना** – इस परीक्षण द्वारा छात्र से प्रश्न पूछे जाते हैं और छात्र प्रश्न के उत्तर अपनी परिकल्पनाओं के निर्माण के आधार पर अभिव्यक्त करता है।
4. **वस्तु विशेष की समुन्नति** – इस परीक्षण में छात्र कोई खिलौना या मशीन बनाकर सृजनात्मक अभिव्यक्त प्रदर्शित करता है।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति आकलन के लाभ

छात्र की सृजनात्मकता को पोषित कर उससे सृजनात्मक अभिव्यक्ति करवाने के निम्न लाभ है-

1. छात्र में उत्तर देने की स्वतन्त्रता उत्पन्न होती है। इसके द्वारा छात्रों को समस्याओं के समाधान के लिए अधिक से अधिक विचारों के चिंतन के लिए उत्साहित किया जाता है।
2. इसके द्वारा छात्र में मौलिकता प्रोत्साहित होती है।
3. इसके द्वारा छात्र की झिझक व डर दूर होता है।
4. इसके द्वारा छात्र सृजनशील अभिव्यक्तियाँ करने लगता है जैसे- पाठ्य सहगामी क्रियाओं, सामाजिक उत्सवों, धार्मिक मेलों, प्रदर्शनों आदि में सक्रीय भागीदारी लेने लगता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिये –
प्रयोजना के कितने प्रकार होते हैं? स्पष्ट कीजिये
....
विज्ञान के आकलन में सृजनात्मक अभिव्यक्ति का क्या महत्व है?
....

5.13 सारांश

किसी व्यक्ति या वस्तु के उद्देश्य प्राप्ति की दिशा में की गई क्रिया ही आकलन है। आकलन ऐसी प्रक्रिया है जो किसी निर्माणाधीन शिक्षा नीति, योजना अथवा कार्यक्रम, पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधि, शिक्षण सामग्री अथवा मूल्यांकन विधि की संरचना को अन्तिम रुप देने से पहले किया जाता है। सतत् एवं निरंतर मूल्यांकन से छात्र को प्रगति सीमा और नियमित मूल्यांकन में सहायता मिलती है। बालक विद्यालय में रहकर जो कुछ सीखता है उसे हम उपलब्धि (Achievement) कहते हैं तथा इस उपलब्धि की जाँच के लिए जो परीक्षाएं ली जाती हैं उन्हें उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test) कहते हैं। प्राचीन काल में भी शिक्षक एवं शिक्षालय का प्रथम दायित्व अपने शिष्यों की उपलब्धि का मूल्यांकन करना रहा है। शिक्षा के उद्देश्यों में संशोधन एवं परिवर्तन के साथ-साथ हमारी मूल्यांकन एवं मापन की प्रक्रिया भी बदलती रहती है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा का तात्पर्य मापन की

उस प्रविधि अथवा परीक्षा से है जिसका निर्माण निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए किया जाता है। इनके द्वारा विद्यार्थियों की ज्ञान की उपलब्धि, योग्यता, अभिवृत्ति, अभिरुचि तथा बुद्धि आदि का परीक्षण थोड़े समय में किया जा सकता है। सबसे पहले वस्तुनिष्ठ परीक्षा का लिखित रूप से निर्माण होरास मैन ने 1854 में किया था। इसके पश्चात् जार्ज फिशर, जे.एम. राइस तथा स्टार्च एवं थार्नडाइक आदि विद्वानों ने शैक्षणिक निष्पत्ति के मापन हेतु सैकड़ों वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ बनाई और आज भी विभिन्न प्रकार की वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रयोग छात्रों की निष्पत्ति के मापन के लिए किया जाता है।

5.15. अभ्यास प्रश्न

1. विज्ञान में एक उपलब्धि परीक्षण के निर्माण के प्रमुख पदों की व्याख्या कीजिये।
2. विज्ञान में एक वस्तुनिष्ठ परिक्षण का निर्माण कीजिये।
3. विज्ञान शिक्षण में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की क्या भूमिका है।
4. मापन, मू ल्यांकन एवं आकलन में अंतर स्पष्ट कीजिए।

5.15 संदर्भ ग्रंथ

कुल श्रेष्ठ, एस. पी. – 'भौतिकीय विज्ञान शिक्षण', लॉयल बुक डिपो ,1993
मंगल , एस . के. – 'भोतिकी एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण', आर्य बुक डिपो , नई दिल्ली, 1995
भूषण शैलेन्द्र - 'भौतिकीय विज्ञान शिक्षण', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा ,2011
वात्स्यायन टी. – 'विज्ञान शिक्षण की आधुनिक विधियाँ', लोक शिक्षा मंच, नई दिल्ली, 2010
पाण्डेय शशि किरण – 'विज्ञान शिक्षण', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
कुमार आलोक , शिवेन्द्र सोती , वर्मा वीरेन्द्र - 'विज्ञान शिक्षण', इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2003

निवेदन- विगत कुछ वर्षों से सेवारत शिक्षकों के लिए अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम उथल पुथल के दौर से गुजरा है। इस संदर्भ में नयी पाठ्यचर्या को लागू करना और उसके अनुसार समय की सीमा के अन्तर्गत अध्येताओं को सामग्री उपलब्ध करवाना एक चुनौती भरा कार्य था। इस चुनौती को जिन लेखकों और संकलनकर्ताओं की मदद से सुगम किया गया, वे सब बधाई के पात्र हैं। प्रत्येक अध्ययन सामग्री में जिन मूल पुस्तकों का सहयोग लिया गया है, उनका यथासंभव संदर्भ ग्रन्थों के रूप में उल्लेख किया गया है। लेखक और संकलनकर्ता मूल ग्रन्थों के लेखकों के उद्यम और बौद्धिक सक्रियता का सम्मान करते हैं और इनके प्रति आभार ज्ञापित करते हैं। यदि यह ज्ञात होता है कि किसी मूल ग्रन्थ का नामोल्लेख रह गया है तो उसे भी हम साभार सम्मिलित करेंगे। पाठकों से अनुरोध है कि वे अपना फीडबैक उपलब्ध कराते रहे जिससे इस सामग्री को उत्तरोत्तर गुणवत्ता संपन्न किया जा सके।